चंद्रकांता संतति चौदहवां भाग

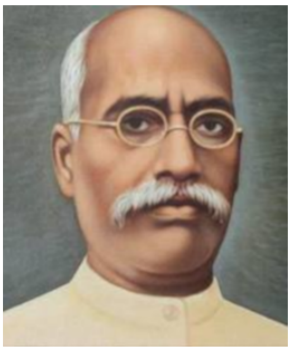

बाबू देवकीनंदन खत्री

चंद्रकांता संतति

चौदहवां भाग

यान - 1

धन्नूसिंह की बातों ने शिवदत्त और कल्याणसिंह को ऐसा बदहवास कर दिया कि उन्हें बात करना मुश्किल हो गया। शिवदत्त सोच रहा था कि कुछ देर की सच्ची मोहलत मिले तो मनोरमा से उसकी बहिन का हाल पूछे मगर उसी समय घबराई हुई मनोरमा खुद ही वहां आ पहुंची और उसने जो कुछ कहा वह और भी परेशान करने वाली बात थी। आखिर शिवदत्त ने मनोरमा से पूछा, "क्या तुमने अपनी आंखों से भूतनाथ को देखा?'

मनोरमा - हां, मैंने स्वयं देखा और उसने वह बात मुझी से कही थी जो मैं आप से कह चुकी हूं?

शिवदत्त - क्या वह तुम्हारी पालकी के पास आया था?

मनोरमा - हां, मैं माधवी से बात कर रही थी कि वह निडर होकर हम लोगों के पास आ पहुंचा और धमकाकर चला गया।

शिवदत्त - तो तुमने आदमियों को ललकारा क्यों नहीं?

मनोरमा - क्या आप भूतनाथ को नहीं जानते कि वह कैसा भयानक आदमी है क्या वे तीन-चार आदमी भूतनाथ को गिरफ्तार कर लेते जो मेरी पालकी के पास थे

शिवदत्त - ठीक है, वह बड़ा ही भयानक ऐयार है, दो-चार क्या दस-पांच आदमी भी उसे गिरफ्तार नहीं कर सकते। मैं तो उसके नाम से कांप जाता हूं। ओफ, वह समय मुझे कदापि नहीं भूल सकता जब उसने 'रूहा' बनकर मुझे अपने चंगुल में फंसा लिया था।[1] अपने चेले को भीमसेन की सूरत ऐसा बनाया कि मैं भी पहिचान न सका। मगर बड़े आश्चर्य की बात यह है कि आज वह असली सूरत में तुम्हें दिखाई पड़ा। उसका इस तरह चले आना मामूली बात नहीं है!

1. देखिये चन्द्रकान्ता सन्तति, छठवाँ भाग, दूसरा बयान।

मनोरमा - जितना मैं उसका हाल जानती हूं आप उसका सोलहवां हिस्सा भी न जानते होंगे, और यही सबब है कि इस समय डर के मारे मेरा कलेजा कांप रहा है, फिर जहां तक मैं खयाल करती हूं वह अकेला भी नहीं है।

शिवदत्त - नहीं-नहीं, वह अकेला कदापि न होगा। **(**धन्नूसिंह की तरफ इशारा करके**)** इसने भी एक ऐसी ही भयानक खबर मुझे सुनाई है।

मनोरमा **-** (ताज्जुब से) वह क्या?

शिवदत्त - इसका हाल धन्नूसिंह की जुबानी ही सुनना ठीक होगा। **(**धन्नूसिंह से**)** हां, तुम जरा उन बातों को दोहरा तो जाओ!

धन्नूसिंह - बहुत खूब।

इतना कहकर धन्नूसिंह उन बातों को ऐसे ढंग से दोहरा गया कि मनोरमा का कलेजा कांप उठा और शिवदत्त तथा कल्याणसिंह पर पहिले से भी ज्यादे असर पड़ा।

शिवदत्त - (मनोरमा से) क्या वास्तव में वह तुम्हारी बहिन है?

मनोरमा - राम-राम, ऐसी भयानक राक्षसी मेरी बहिन हो सकती है असल तो यह है कि मैं अकेली हूं, न कोई बहिन है न भाई।

धन्नू - तब जरा खड़े-खड़े उसके पास चली जाओ और जो कुछ वह पूछे उसका जवाब दे दो।

मनोरमा - (रंज होकर) मैं क्यों उसके पास जाने लगी! जाकर कह दो कि मनोरमा नहीं आती।

धन्नू - (खैरख्वाही दिखाने के ढंग से) मालूम होता है कि तुम अपने साथ ही साथ हमारे मालिक पर भी आफत लाया चाहती हो। (शिवदत्त से) महाराज, उस राक्षसी ने जितनी बातें मुझसे कहीं मैं अदब के खयाल से अर्ज नहीं कर सकता तथापि एक बात केवल आप ही से कहने की इच्छा है।

धन्नूसिंह की बात सुनकर मनोरमा को डर के साथ ही साथ क्रोध भी चढ़ आया और वह कड़ी निगाह से धन्नूसिंह की तरफ देखकर बोली, "महाराज के खैरखाह एक तुम्हीं तो दिखाई देते हो इतनी बड़ी फौज की अफसरी करने के लिए क्यों मरे जाते हो जो एक औरत के सामने जाने की हिम्मत नहीं है?'

धन्नू - हिम्मत तो लाखों आदमियों के बीच में घुसकर तलवार चलाने की है, मगर केवल तुम्हारे सबब से अपने मालिक पर आफत लाने और अपनी जान देने का हौसला कोई बेवकूफ आदमी भी नहीं कर सकता। (शिवदत्त से) तिस पर भी महाराज जो आज्ञा दें उसे करने के लिए मैं तैयार हूं, यदि आग में कूद पड़ने के लिए भी कहें तो क्षण भर देर लगाने वाले पर लानत भेजता हूं, परन्तु मेरी बात को सुनकर तब जो चाहें आज्ञा दें!

इतना सुनकर शिवदत्त उठ खड़ा हुआ और धन्नूसिंह को अपने पीछे आने का इशारा करके कुछ दूर चला गया जहां से उनकी बातचीत कोई दूसरा नहीं सुन सकता था।

शिवदत्त - हां धन्नूसिंह कहो अब क्या कहते हो?

धन्नू - महाराज क्षमा करें, रंज न हों! मैं सरकार का नमकख्वार गुलाम हूं इसलिए सिवाय सरकार की भलाई के मुझे और कुछ भी नहीं सूझता। मैं यह नहीं चाहता कि मनोरमा के सबब से, जो आपकी कुछ भी भलाई नहीं कर सकती बल्कि आपके सबब से अपने को फायदा पहुंचा सकती है, आप किसी आफत में फंस जायें। मैं सच कहता हूं कि वह भयानक औरत साधारण नहीं मालूम होती। उसने कसम खाकर कहा था कि, "मैं केवल एक पहर तक राजा शिवदत्त का मुलाहिजा करूंगी, इसके अन्दर अगर मनोरमा मेरे पास न भेजी जायगी या अलग न कर दी जायगी तो राजा शिवदत्त को इस दुनिया से उठा दूंगी और अपने कुत्तों को जो आदमी के खून के हरदम प्यासे रहते हैं...!" बस महाराज अब आगे कहने से अदब जबान रोकता है। (कांपकर) ओफ! वे भयानक कुत्ते जो शेर का कलेजा फाड़कर खा जायें (रुककर) फिर मनोरमा की जुबानी भी आप सुन ही चुके हैं कि भूतनाथ यकायक यहां पहुंचकर मनोरमा से क्या कह गया है इसलिए (हाथ जोड़कर) मैं अर्ज करता हूं कि किसी बहाने मनोरमा को अपने से अलग करें। सरकार खूब समझ सकते हैं कि जिस काम के लिए जा रहे हैं उसमें सिवाय कुंअर कल्याणसिंह के और कोई भी मदद नहीं कर सकता, फिर एक मामूली औरत के लिए अपना हर्ज या नुकसान करना उचित नहीं, आगे महाराज मालिक हैं जो चाहें करें।

शिवदत्त - तुम्हारा कहना बहुत ठीक है, मैं भी यही सोच रहा हूं।

जिस जगह ये दोनों खड़े होकर बातें कर रहे थे वहां एकदम निराला था, कोई आदमी पास न था। शिवदत्त ने अपनी बात पूरी भी न की थी यकायक भूतनाथ वहां आ पहुंचा और कड़ाई के ढंग से शिवदत्त की तरफ देखकर बोला, "इस अंधेरे में शायद तुम मुझे न पहिचान सको इसलिए मैं अपना नाम भूतनाथ बताकर तुम्हें होशियार करता हूं कि घण्टे भर के अन्दर मेरी खुराक मनोरमा को मेरे हवाले करो या अपने साथ से अलग कर दो नहीं तो जीता न छोड़ूंगा!" इतना कहकर बिना कुछ जवाब सुने भूतनाथ वहां से चला गया और शिवदत्त उसकी तरफ देखता ही रह गया।

शिवदत्त एक दफे भूतनाथ के हाथ में पड़ चुका था और भूतनाथ ने जो सलूक उसके साथ किया था उसे वह कदापि भूल नहीं सकता था बल्कि भूतनाथ के नाम ही से उसका कलेजा कांपता था, इसलिए वहां यकायक भूतनाथ के आ पहुंचने से वह कांप उठा और धन्नूसिंह की तरफ देखकर बोला, "निःसन्देह यह बड़ा ही भयानक ऐयार है!"

धन्नू - इसीलिए मैं अर्ज करता हूं कि साधारण औरत के लिए इस भयानक ऐयार और उस राक्षसी को अपना दुश्मन बना लेना उचित नहीं है।

शिवदत्त - तुम ठीक कहते हो, अच्छा आओ मैं कल्याणसिंह से राय मिलाकर इसका बन्दोबस्त करता हूं।

धन्नूसिंह को साथ लिये हुए शिवदत्त अपने ठिकाने पहुंचा जहां कल्याणसिंह और मनोरमा को छोड़ गया था। मनोरमा को यह कहकर वहां से विदा कर दिया कि - "तुम अपने ठिकाने जाकर बैठो, हम यहां से कुछ करने का बन्दोबस्त करते हैं और निश्चय हो जाने पर तुमको बुलावेंगे" और जब वह चली गई और वहां केवल ये ही तीन आदमी रह गये तब बातचीत होने लगी।

शिवदत्त ने धन्नूसिंह की जुबानी जो कुछ सुना था और धन्नूसिंह की जो कुछ राय हुई थी वह सब तथा बातचीत के समय यकायक भूतनाथ के आ पहुंचने और धमकाकर चले जाने का पूरा हाल कल्याणसिंह से कहा और पूछा कि - "अब आपकी क्या राय होती है' कुंअर कल्याणसिंह ने कहा, "मैं धन्नूसिंह की राय पसन्द करता हूं। मनोरमा के लिए अपने को आफत में फंसाना बुद्धिमानी का काम नहीं है, अस्तु किसी मुनासिब ढंग से उसे अलग ही कर देना चाहिए।"

शिवदत्त - तिस पर भी अगर जान बचे तो समझें कि ईश्वर की बड़ी कृपा हुई।

कल्याण - सो क्या?

शिवदत्त - मैं यह सोच रहा हूं कि भूतनाथ का यहां आना केवल मनोरमा ही के लिए नहीं है। ताज्जुब नहीं कि हम लोगों का कुछ भेद भी उसे मालूम हो और वह हमारे काम में बाधा डाले।

कल्याण - ठीक है, मगर काम आधा हो चुका है केवल हमारे और आपके वहां पहुंचने भर की देर है। यदि भूतनाथ हम लोगों का पीछा भी करेगा तो रोहतासगढ़ तहखाने के अन्दर हमारी मर्जी के बिना वह कदापि नहीं जा सकता और जब तक मनोरमा को ले जाकर कहीं रखने या अपना कोई काम निकालने का बन्दोबस्त करेगा तब तक तो हम लोग रोहतासगढ़ में पहुंचकर जो कुछ करना है कर गुजरेंगे।

शिवदत्त - ईश्वर करे ऐसा ही हो, अच्छा अब यह कहिये कि मनोरमा को किस ढंग से अलग करना चाहिए?

कल्याण - (धन्नूसिंह से) तुम बहुत पुराने और तजुर्बेकार आदमी हो, तुम ही बताओ कि क्या करना चाहिए?

धन्नू - मेरी तो यही राय है कि मनोरमा को बुलाकर समझा दिया जाय कि "अगर तुम हमारे साथ रहोगी तो भूतनाथ तुम्हें कदापि न छोड़ेगा, सो तुम मर्दानी पोशाक पहिरकर धन्नूसिंह के (हमारे) साथ शिवदत्तगढ़ की तरफ चली जाओ, वह तुम्हें हिफाजत के साथ वहां पहुंचा देगा, जब हम लौटकर तुमसे मिलेंगे तो जैसा होगा किया जायेगा। अगर तुम अपने आदमियों को साथ ले जाना चाहोगी तो भूतनाथ को मालूम हो जायेगा, अतएव तुम्हारा अकेले ही यहां से निकल जाना उत्तम है।"

शिवदत्त - ठीक है लेकिन अगर वह इस बात को मंजूर कर ले तो क्या तुम भी उसी के साथ जाओगे तब तो हमारा बड़ा हर्ज होगा?

धन्नू - जी नहीं, मैं चार-पांच कोस तक उसके साथ जाऊंगा इसके बाद भुलावा देकर उसे अकेला छोड़ आपसे आ मिलूंगा।

शिवदत्त - (आश्चर्य से) धन्नूसिंह, क्या तुम्हारी अक्ल में कुछ फर्क पड़ गया है या तुम्हें निसयान (भूल जाने) की बीमारी हो गई है अथवा तुम कोई दूसरे धन्नूसिंह हो गए हो क्या तुम नहीं जानते कि मनोरमा ने मुझे किस तरह से रुपये की मदद की है और उसके पास कितनी दौलत है तुम्हारी ही मार्फत मनोरमा से कितने ही रुपये मंगवाये थे तो क्या इस हीरे की चिड़िया को मैं छोड़ सकता हूं अगर ऐसा ही करना होता तो तरद्दुद की जरूरत ही क्या थी, इसी समय कह देते कि हमारे यहां से निकल जा!

धन्नू - (कुछ सोचकर) आपका कहना ठीक है, मैं तो इन बातों को भूल नहीं गया, मैं खूब जानता हूं कि वह बेइन्तहा खजाने की चाभी है, मगर मैंने यह बात इसलिए कही कि जब उसके सबब से हमारे सरकार ही आफत में फंस जायेंगे तो वह हीरे की चिड़िया किसके काम आवेगी!

शिवदत्त - नहीं-नहीं तुम इसके सिवाय और कोई तर्कीब ऐसी सोचो जिसमें मनोरमा इस समय हमारे साथ से अलग तो जरूर हो जाय मगर हमारी मुट्ठी से न निकल जाय।

धन्नू - (सोचकर) अच्छा तो एक काम किया जाये।

शिवदत्त - वह क्या?

धन्नू - इसे तो आप निश्चय जानिये कि यदि मनोरमा इस लश्कर के साथ रहेगी तो भूतनाथ के हाथ से कदापि न बचेगी और जैसा कि भूतनाथ कह चुका है कि सरकार के साथ भी बेअदबी जरूर करेगा, इसलिए यह तो अवश्य है कि उसे अलग जरूर किया जाये मगर वह रहे अपने कब्जे ही में। तो बेहतर यह होगा कि वह मेरे साथ की जाय, मैं जंगल ही जंगल एक गुप्त पगडण्डी से जिसे मैं बखूबी जानता हूं रोहतासगढ़ तक उसे ले जाऊं और जहां आप या कुंअर साहब आज्ञा दें ठहरकर राह देखूं। भूतनाथ को जब मालूम हो जायगा कि मनोरमा अलग कर दी गई तब वह उसे खोजने की धुन में लगेगा, मगर मुझे नहीं पा सकता। हां एक बात और है, आप भी यहां से शीघ्र ही डेरा उठायें और मनोरमा की पालकी इसी जगह छोड़ दें जिससे मनोरमा को अलग कर देने का विश्वास भूतनाथ को पूरा-पूरा हो जाय।

कल्याण - हां यह राय बहुत अच्छी है, मैं इसे पसन्द करता हूं।

शिवदत्त - मुझे भी पसन्द है, मगर धन्नूसिंह को टिककर राह देखने का ठिकाना बताना आप ही का काम है।

कल्याण - हां-हां, मैं बताता हूं, सुनो धन्नूसिंह!

धन्नू - सरकार!

कल्याण - रोहतासगढ़ पहाड़ी के पूरब तरफ एक बहुत बड़ा कुआं है और उस पर टूटी-फूटी इमारत भी है।

धन्नू - जी हां मुझे मालूम है।

कल्याण - अच्छा तो अगर तुम उस कुएं पर खड़े होकर पहाड़ की तरफ देखोगे तो टीले के ढंग का एक खण्ड पर्वत दिखाई देगा जिसके ऊपर सूखा हुआ पुराना पीपल का पेड़ है और उसी पेड़ के नीचे एक खोह का मुहाना है। उसी जगह तुम हम लोगों का इन्तजार करना क्योंकि उसी खोह की राह से हम लोग रोहतासगढ़ तहखाने के अन्दर घुसेंगे, मगर उस झील तक पहुंचने का रास्ता जब तक हम न बतावें तुम वहां नहीं जा सकते। (शिवदत्त से) आप मनोरमा को बुलवाकर सब हाल कहिये, अगर वह मंजूर करे तो हम धन्नूसिंह को रास्ते का हाल समझा दें।

शिवदत्त - (धन्नूसिंह से) तुम ही जाकर उसे बुला लाओ।

"बहुत अच्छा" कहकर धन्नूसिंह चला गया और थोड़ी ही देर में मनोरमा को साथ लिये आ पहुंचा। उसके विषय में जो कुछ राय हो चुकी थी उसे कल्याणसिंह ने ऐसे ढंग से मनोरमा को समझाया कि उसने कबूल कर लिया और धन्नूसिंह के साथ चले जाना ही अच्छा समझा। कुंअर कल्याणसिंह ने उस टीले तक पहुंचने का रास्ता धन्नूसिंह को अच्छी तरह समझा दिया। दो घोड़े चुपचुपाते तैयार किये गये, मनोरमा ने मर्दानी पोशाक पालकी के अन्दर बैठकर पहिरी और घोड़े पर सवार हो धन्नूसिंह के साथ रवाना हो गई। धन्नूसिंह की सवारी का घोड़ा बनिस्बत मनोरमा के घोड़े के तेज और ताकतवर था।

बयान **- 2**

मनोरमा और धन्नूसिंह घोड़ों पर सवार होकर तेजी के साथ वहां से रवाना हुए और चार कोस तक बिना कुछ बातचीत किए चले आए। जब ये दोनों एक ऐसे मैदान में पहुंचे जहां बीचोंबीच में एक बहुत बड़ा आम का पेड़ और उसके चारों तरफ आधा कोस का साफ मैदान था, यहां तक कि सरपत, जंगली बेर या पलास का भी कोई पेड़ न था, जिसका होना जंगल या जंगल के आस-पास आवश्यक समझा जाता है, तब धन्नूसिंह ने अपने घोड़े का मुंह उसी आम के पेड़ की तरफ यह कहके फेरा - "मेरे पेट में कुछ दर्द हो रहा है इसलिए थोड़ी देर तक इस पेड़ के नीचे ठहरने की इच्छा होती है।"

मनोरमा - क्या हर्ज है ठहर जाओ, मगर खौफ है कि कहीं भूतनाथ न आ पहुंचे।

धन्नू - अब भूतनाथ के आने की आशा छोड़ो क्योंकि जिस राह से हम लोग आये हैं वह भूतनाथ को कदापि मालूम न होगी, मगर मनोरमा, तुम तो भूतनाथ से इतना डरती हो कि...?

मनोरमा **-** (बात काटकर) भूतनाथ निःसन्देह ऐसा ही भयानक ऐयार है। पर थोड़े ही दिन की बात है कि जिस तरह आज मैं भूतनाथ से डरती हूं उससे ज्यादे भूतनाथ मुझसे डरता था।

धन्नू - हां जब तक उसके कागजात तुम्हारे या नागर के कब्जे में थे!

मनोरमा **-** (चौंककर, ताज्जुब से) क्या यह हाल तुमको मालूम है?

धन्नू - हां बहुत अच्छी तरह।

मनोरमा - सो कैसे?

इतने ही में वे दोनों उस पेड़ के नीचे पहुंच गये और धन्नूसिंह यह कहकर घोड़े से नीचे उतर गया कि 'अब जरा बैठ जायें तो कहें'।

मनोरमा भी घोड़े से नीचे उतर पड़ी। दोनों घोड़े लम्बी बागडोर के सहारे डाल के साथ बांध दिये गए और जीनपोश बिछाकर दोनों आदमी जमीन पर बैठ गये। रात आधी से ज्यादे जा चुकी थी और चन्द्रमा की विमल चांदनी जिसका थोड़ी ही देर पहिले कहीं नामनिशान भी न था बड़ी खूबी के साथ चारों तरफ फैल रही थी।

मनोरमा - हां अब बताओ कि भूतनाथ के कागजात का हाल तुम्हें कैसे मालूम हुआ?

धन्नू - मैंने भूतनाथ की ही जुबानी सुना था।

मनोरमा - हैं! क्या तुमसे और भूतनाथ से जान-पहिचान है?

धन्नू - बहुत अच्छी तरह।

मनोरमा - तो भूतनाथ ने तुमसे यह भी कहा होगा कि उसने अपने कागजात नागर के हाथ से कैसे पाये!

धन्नू - हां, भूतनाथ ने मुझसे वह किस्सा भी बयान किया था, क्या तुमको वह हाल मालूम नहीं हुआ?

मनोरमा - मुझे वह हाल कैसे मालूम होता मैं तो मुद्दत तक कमलिनी के कैदखाने मैं सड़ती रही, और जब वहां से छूटी तो दूसरे ही फेर में पड़ गयी, मगर तुम जब सब हाल जानते ही हो तो फिर जान-बूझकर ऐसा सवाल क्यों करते हो?

धन्नू - ओफ, पेट का दर्द ज्यादे होता जा रहा है! जरा ठहरो तो मैं तुम्हारी बातों का जवाब दूं।

इतना कहकर धन्नूसिंह चुप हो गया और घण्टे भर से ज्यादे देर तक बातों का सिलसिला बन्द रहा। धन्नूसिंह यद्यपि इतनी देर तक चुप रहा मगर बैठा ही रहा और मनोरमा की तरफ से इस तरह होशियार और चौकन्ना रहा जैसे किसी दुश्मन की तरफ से होना वाजिब था, साथ ही इसके धन्नूसिंह की निगाह मैदान की तरफ भी इस ढंग से पड़ती रही जैसे किसी के आने की उम्मीद हो। मनोरमा उसके इस ढंग पर

आश्चर्य कर रही थी। यकायक उस मैदान में दो आदमी बड़ी तेजी के साथ दौड़ते हुए उसी तरफ आते दिखाई पड़े जिधर मनोरमा और धन्नूसिंह का डेरा जमा हुआ था।

मनोरमा - ये दोनों कौन हैं जो इस तरफ आ रहे हैं?

धन्नू - यही बात मैं तुमसे पूछा चाहता था मगर जब तुमने पूछ ही लिया तो कहना पड़ेगा कि इन दोनों में एक तो भूतनाथ है।

मनोरमा - क्या तुम मुझसे दिल्लगी कर रहे हो?

धन्नू - नहीं, कदापि नहीं।

मनोरमा - तो फिर ऐसी बातें क्यों कहते हो?

धन्नू - इसलिए कि मैं वास्तव में धन्नूसिंह नहीं हूं।

मनोरमा **-** (चौंककर) तो तुम फिर कौन हो?

धन्नू - भूतनाथ का दोस्त और इन्द्रदेव का ऐयार सर्यूसिंह।

इतना सुनते ही मनोरमा का रंग बदल गया और उसने बड़ी फुर्ती से अपना दाहिना हाथ सर्यूसिंह के चेहरे की तरफ बढ़ाया मगर सर्यूसिंह पहले ही से होशियार और चौकन्ना था, उसने चालाकी से मनोरमा की कलाई पकड़ ली।

मनोरमा की उंगली में उसी तरह के जहरीले नगीने वाली अंगूठी थी जैसी कि नागर की उंगली में थी और जिसने भूतनाथ को मजबूर कर दिया था तथा जिसका हाल इस उपन्यास के सातवें भाग में हम लिख आये हैं। उसी अंगूठी से मनोरमा ने नकली धन्नूसिंह को मारना चाहा मगर न हो सका क्योंकि उसने मनोरमा की कलाई पकड़ ली और उसी समय भूतनाथ और सर्यूसिंह के शागिर्द भी वहां आ पहुंचे। अब मनोरमा ने अपने को काल के मुंह में समझा और वह इतना डरी कि जो कुछ उन ऐयारों ने कहा बेउज्र करने के लिए तैयार हो गई। भूतनाथ के हाथ से क्षमा-प्रार्थना की सहायता से छूटने की आशा मनोरमा को कुछ भी न थी, इसीलिए जब तक भूतनाथ ने उससे किसी तरह का सवाल न किया वह भी कुछ न बोली और बेउज्र हाथ-पैर बंधवाकर कैदियों की तरह मजबूर हो गई। इसके बाद भूतनाथ तथा सर्यूसिंह में यों बातचीत होने लगी -

भूत - अब क्या करना होगा?

सर्यू - अब यही करना होगा कि तुम इसे अपने घोड़े पर सवार कराके घर ले जाओ और हिफाजत के साथ रखकर शीघ्र लौट आओ।

भूत - और उस धन्नूसिंह के बारे में क्या किया जाये जिसे आप गिरफ्तार करने के बाद बेहोश करके डाल आए हैं?

सर्यू - (कुछ सोचकर) अभी उसे अपने कब्जे ही में रखना चाहिए क्योंकि मैं धन्नूसिंह की सूरत में राजा शिवदत्त के साथ रोहतासगढ़ तहखाने के अन्दर जाकर इन दुष्टों की चालबाजियों को जहां तक हो सके बिगाड़ा चाहता हूं, ऐसी अवस्था में अगर वह छूट गया तो केवल काम ही नहीं बिगड़ेगा बल्कि मैं खुद आफत में फंस जाऊंगा यदि शिवदत्त के साथ रोहतासगढ़ के तहखाने में जाने का साहस करूंगा।

इसके बाद सर्यूसिंह ने भूतनाथ से वे बातें कहीं जो उससे और शिवदत्त तथा कल्याणसिंह से हुई थीं जो हम ऊपर लिख आए हैं। उस समय मनोरमा को मालूम हुआ कि नकली धन्नूसिंह ने जिस भयानक कुत्ते वाली औरत का हाल शिवदत्त से कहा और जिसे मनोरमा की बहिन बताया था वह सब बिल्कुल झूठ और बनावटी किस्सा था।

भूत - (सर्यूसिंह से) तब तो आपको दुश्मनों के साथ मिल-जुलकर रोहतासगढ़ तहखाने के अन्दर जाने का बहुत अच्छा मौका है।

सर्यू - हां इसी से मैं कहता हूं कि उस धन्नूसिंह को अभी अपने कब्जे में ही रखना चाहिए जिसे हम लोगों ने गिरफ्तार किया है।

भूत - कोई चिन्ता नहीं, मैं लगे हाथ किसी तरह उसे भी अपने घर पहुंचा दूंगा। (शागिर्द की तरफ इशारा करके) इसे तो आप मनोरमा बनाकर अपने साथ ले जाएंगे?

सर्यू - जरूर ले जाऊंगा और कल्याणसिंह के बताये हुए ठिकाने पर पहुंचकर उन लोगों की राह देखूंगा।

भूत - और मुझको क्या काल सुपुर्द किया जाता है।

सर्यू - मुझे इस बात का पता ठीक-ठीक लग चुका है कि शेरअलीखां आजकल रोहतासगढ़ में है और कुंअर कल्याणसिंह उससे मदद लिया चाहता है। ताज्जुब नहीं

कि अपने दोस्त का लड़का समझकर शेरअलीखां उसकी मदद करे, और अगर ऐसा हुआ तो राजा वीरेन्द्रसिंह को बड़ा नुकसान पहुंचेगा।

भूत - मैं आपका मतलब समझ गया, अच्छा तो इस काम से छुट्टी पाकर मैं बहुत जल्द रोहतासगढ़ पहुंचूंगा और शेरअलीखां की हिफाजत करूंगा। (कुछ सोचकर) मगर इस बात का खौफ है कि अगर मेरा वहां जाना राजा वीरेन्द्रसिंह पर खुल जायगा तो कहीं मुझे बिना बलभद्रसिंह का पता लगाये लौट आने के जुर्म में सजा तो न मिलेगी (इतना कहकर भूतनाथ ने मनोरमा की तरफ देखा)।

सर्यू - नहीं-नहीं, ऐसा न होगा, और अगर हुआ भी तो मैं तुम्हारी मदद करूंगा।

बलभद्रसिंह का नाम सुनकर मनोरमा जो सब बातचीत सुन रही थी चौंक पड़ी और उसके दिन में एक हौल-सा पैदा हो गया। उसने अपने को रोकना चाहा मगर रोक न सकी और घबड़ाकर भूतनाथ से पूछ बैठी, "बलभद्रसिंह कौन!"

भूत - (मनोरमा से) लक्ष्मीदेवी का बाप, जिसका पता लगाने के लिए ही हम लोगों ने तुझे गिरफ्तार किया है।

मनोरमा - (घबड़ाकर) मुझसे और उससे भला क्या सम्बन्ध मैं क्या जानूं वह कौन है और कहां है और लक्ष्मीदेवी किसका नाम है!

भूत - खैर जब समय आवेगा तो सब-कुछ मालूम हो जायगा। (हंसकर) लक्ष्मीदेवी से मिलने के लिए तो तुम लोग रोहतासगढ़ जाते ही थे मगर बलभद्रसिंह और इन्दिरा से मिलने का बन्दोबस्त अब मैं करूंगा, घबड़ाती काहे को हो!

मनोरमा - (घबड़ाहट के साथ ही बेचैनी से) इन्दिरा, कैसी इन्दिरा ओफ! नहीं-नहीं, मैं क्या जानूं कौन इन्दिरा! क्या तुम लोगों से उसकी मुलाकात हो गई क्या उसने मेरी शिकायत की थी! कभी नहीं, वह झूठी है, मैं तो उसे प्यार करती थी और अपनी बेटी समझती थी! मगर उसे किसी ने बहका दिया है या बहुत दिनों तक दुःख भोगने के कारण वह पागल हो गई है, या ताज्जुब नहीं कि मेरी सूरत बनकर किसी ने उसे धोखा दिया हो, नहीं-नहीं, वह मैं न थी कोई दूसरी थी, मैं उसका नाम बताऊंगी। (ऊंची सांस लेकर) नहीं-नहीं, इन्दिरा, नहीं, मैं तो मथुरा गई हुई थी, वह कोई दूसरी ही थी, भला मैं तेरे साथ क्यों ऐसा करने लगी थी! ओफ! मेरे पेट में दर्द हो रहा है, आह, आह, मैं क्या करूं!

मनोरमा की अजब हालत हो गई, उसका बोलना और बकना पागलों की तरह मालूम पड़ता था जिसे देख भूतनाथ और सर्यूसिंह आश्चर्य करने लगे, मगर दोनों ऐयार इतना तो समझ ही गये कि दर्द का बहाना करके मनोरमा अपने असली दिली दर्द को छिपाना चाहती है जो होना कठिन है।

सर्यू - (भूतनाथ से) खैर अब इसका पाखण्ड कहां तक देखोगे, बस झटपट ले जाओ और अपना काम करो, यह समय अनमोल है और इसे नष्ट न करना चाहिए। (अपने शागिर्द की तरफ इशारा करके) इसे हमारे पास छोड़ जाओ, मैं भी अपने काम की फिक्र में लगूं।

भूतनाथ ने बेहोशी की दवा सुंघाकर मनोरमा को बेहोश किया और जिस घोड़े पर वह आई थी उसी पर उसे लाद आप भी सवार हो पूरब का रास्ता लिया, उधर सर्यूसिंह अपने चेले को मनोरमा बनाने की फिक्र में लगा।

बयान - 3

हम ऊपर लिख आए हैं कि शेरअलीखां खातिरदारी और इज्जत के साथ रोहतासगढ़ में रक्खा गया क्योंकि उसने अपने कसूरों की माफी मांगी थी और तेजसिंह ने उसे माफी दे भी दी थी। अब हम उस रात का हाल लिखते हैं जिस रात राजा वीरेन्द्रसिंह, तेजसिंह और इन्द्रदेव वगैरह तहखाने के अन्दर गये थे और यकायक आ पड़ने वाली मुसीबत में गिरफ्तार हो गये थे। उन लोगों का किसी काम के लिए तहखाने के अन्दर जाना शेरअलीखां को मालूम था मगर उसे इन बातों से कोई मतलब न था, उसे तो सिर्फ इसकी फिक्र थी कि भूतनाथ का मुकद्दमा खतम हो ले तो वह अपनी राजधानी पटने की तरफ पधारे और इसीलिए वह राजा वीरेन्द्रसिंह की तरह से रोका भी गया था।

जिस कमरे में शेरअलीखां का डेरा था। वह बहुत लम्बा-चौड़ा और कीमती असबाब से सजा हुआ था। उसके दोनों तरफ दो कोठरियां थीं और बाहर दालान तथा दालान के बाद एक चौखूटा सहन था। उन दोनों कोठरियों में से जो कमरे के दोनों तरफ थीं, एक में तो सोने के लिए बेशकीमती मसहरी बिछी हुई थी और दूसरी कोठरी में पहिरने के कपड़े तथा सजावट का सामान रहता था। इस कोठरी में एक दरवाजा और भी था जो उस मकान के पिछले हिस्से में जाने का काम देता था, मगर इस समय वह बन्द था और उसकी ताली दारोगा के पास थी। जिस कोठरी में सोने की मसहरी थी उसमें सिर्फ एक ही दरवाजा था और दरवाजा वाली दीवार को छोड़के उसकी बाकी

तीनों तरफ की दीवार आबनूस की लकड़ी की बनी हुई थी जिस पर बहुत चमकदार पालिश किया हुआ था। वही अवस्था उस कमरे की भी थी जिसमें शेरअलीखां रहता था।

रात डेढ़ पहर से कुछ ज्यादे जा चुकी थी। शेरअलीखां अपने कमरे में मोटी गद्दी पर लेटा हुआ कोई किताब पढ़ रहा था और सिरहाने की तरफ संगमर्मर की छोटी-सी चौकी के ऊपर शमादान जल रहा था, इसके अतिरिक्त कमरे में और कोई रोशनी न थी। यकायक सोने वाली कोठरी के अन्दर से एक ऐसी आवाज आई जैसे किसी ने मसहरी के पास ठोकर खाई हो। शेरअलीखां चौंक पड़ा और कुछ देर तक उसी कोठरी की तरफ जिसके आगे पर्दा गिरा हुआ था, देखता रहा। जब पर्दे की तरफ जिसे हिलते देखा तो किताब जमीन पर रखकर बैठ गया और उसी समय कल्याणसिंह को पर्दा हटाकर बाहर निकलते देखा। शेरअलीखां घबड़ाकर उठ खड़ा हुआ और बड़े गौर से उसे देखकर बोला, "हैं, क्या तुम कुंअर कल्याणसिंह हो?'

कल्याण **-** (सलाम करके) जी हां।

शेरअली - तुम इस कमरे में कब आये और कब इस कोठरी में गये मुझे कुछ भी नहीं मालूम!!

कल्याण - मैं बाहर से इस कमरे में नहीं आया बल्कि इसी कोठरी में से आ रहा हूं।

शेरअली - सो कैसे इस कोठरी में तो कोई दूसरा रास्ता नहीं है!

कल्याण - जी हां, एक रास्ता है जिसे शायद आप नहीं जानते, मगर पहिले मैं दरवाजा बन्द कर लूं।

इतना कहकर कल्याणसिंह दरवाजे की तरफ बढ़ गया और इस कमरे के तीनों दरवाजे बन्द करके शेरअलीखां के पास लौट आया।

शेरअली - दरवाजे क्यों बन्द कर दिए क्या डरते हो?

कल्याण - जी हां, यदि कोई देख लेगा तो मुश्किल होगी।

शेरअली - तो इससे मालूम होता है कि तुम राजा वीरेन्द्रसिंह की मर्जी से नहीं छूटे बल्कि किसी की मदद और चोरी से निकल भागे हो क्योंकि चुनारगढ़ में तुम्हारे कैद होने का हाल मैं अच्छी तरह जानता हूं।

कल्याण - जी हां ऐसी बात है।

शेरअली - (बैठकर) अच्छा आओ मेरे पास बैठ जाओ और कहो कि तुम कैसे छूटे और यहां क्योंकर आ पहुंचे?

कल्याण - (बैठकर) खुलासा हाल कहने का तो इस समय मौका नहीं है, परन्तु इतना कहना जरूरी है कि अपनी मदद के लिए मुझे राजा शिवदत्त ने छुड़ाया है और अब मैं सहायता लेने के लिए आपके पास आया हूं। यदि आप मदद देंगे तो मैं आज ही राजा वीरेन्द्रसिंह से अपने बाप का बदला ले लूंगा।

शेरअली - (हंसकर) यह तुम्हारी नादानी है। तुम अभी लड़के हो, ऐसे मामलों पर गौर नहीं कर सकते। राजा वीरेन्द्रसिंह के साथ दुश्मनी करना अपने पैर में आप कुल्हाड़ी मारना है, उनसे लड़कर कोई जीत नहीं सकता और न उनके ऐयारों के सामने किसी की चालाकी ही चल सकती है।

कल्याण - आपका कहना ठीक है मगर इस समय हम लोगों ने राजा वीरेन्द्रसिंह और उनके ऐयारों को हर तरह मजबूर कर रक्खा है।

शेरअली - सो कैसे?

कल्याण - क्या आप नहीं जानते कि वीरेन्द्रसिंह और उनके ऐयार किशोरी, कामिनी इत्यादि को लेकर तहखाने के अन्दर गए हैं?

शेरअली - हां सो तो जानता हूं मगर इससे क्या?

कल्याण - जिस समय वीरेन्द्रसिंह वगैरह तहखाने में गए हैं उसके पहिले ही हम लोग अपनी छोटी सेना सहित तहखाने में पहुंच चुके थे और गुप्त राह से यकायक इस किले में पहुंचकर अपना दखल जमाना चाहते थे, मगर ईश्वर ने उन लोगों को तहखाने में ही पहुंचा दिया जिससे हम लोगों को बड़ा सुभीता हुआ, शिवदत्तसिंह ने तो सेना सहित दुश्मनों को घेर लिया है और मैं एक सुरंग की राह से जिसका दूसरा मुहारा (सोने वाली कोठरी की तरफ इशारा करके) इस कोठरी में निकला है, आपके पास मदद के लिए आया हूं। आशा है कि उधर शिवदत्तसिंह ने दुश्मनों को काबू में कर लिया होगा या मार डाला होगा और इधर मैं आपकी मदद से किले में अपना अधिकार जमा लूंगा।

शेरअली - (कुछ सोचकर) मैं खूब जानता हूं कि इस तहखाने का और यहां के पेचीले तथा कई रास्तों का हाल तुमसे ज्यादा जानने वाला अब और कोई नहीं है इसलिए तुम लोगों का तहखाने में राजा वीरेन्द्रसिंह वगैरह को मार डालना तो यद्यपि मुश्किल है हां घेर लिया हो तो ताज्जुब की बात नहीं है, मगर साथ ही इसके इस बात का भी खयाल करना चाहिए कि यद्यपि राजा वीरेन्द्रसिंह वगैरह इस तहखाने का हाल बखूबी नहीं जानते परन्तु आज इन्द्रदेव उनके साथ है जिसे हम-तुम अच्छी तरह जानते हैं। क्या तुम्हें उस दिन की बात याद नहीं जिस दिन तुम्हारे पिता ने हमारे सामने तुमसे कहा था कि यहां के तहखाने का हाल हमसे ज्यादा जानने वाला इस दुनिया में यदि कोई है तो केवल इन्द्रदेव!

कल्याण - (ताज्जुब से) हां मुझे याद है, मगर क्या इन्द्रदेव राजा वीरेन्द्रसिंह के साथ तहखाने में गए हैं और क्या वीरेन्द्रसिंह ने उन्हें अपना दोस्त बना लिया

शेरअली - हां, अस्तु यह आशा नहीं हो सकती कि वीरेन्द्रसिंह वगैरह तुम लोगों के काबू में आ जायेंगे, दूसरी बात यह कि तुम अकेले या दो-एक मददगारों को लेकर इस किले में कर ही क्या सकते हो?

कल्याण - मैं आपके पास अकेला नहीं आया हूं बल्कि सौ सिपाही भी साथ लाया हूं जिन्हें आप आज्ञा देने के साथ ही इसी कोठरी में से निकलते देख सकते हैं। क्या ऐसी हालत में जब कि मालिकों या अफसरों में से यहां कोई भी न हो और यहां रहने वाली केवल पांच-सात सौ की फौज बेफिक्र पड़ी हो, हम और आप बहादुरों को साथ लेकर कुछ नहीं कर सकते इन्द्रदेव का इस समय वीरेन्द्रसिंह वगैरह के साथ तहखाने में होना बेशक हमारे काम में विघ्न डाल सकता है मगर मुझे इसकी भी विशेष चिन्ता नहीं है क्योंकि यदि दुश्मन लोग काबू में न आवेंगे तो हर तरफ से रास्ता बन्द हो जाने के कारण तहखाने के बाहर भी न निकल सकेंगे और भूखे-प्यासे उसी में रहकर मर जायेंगे, और इधर जब आप किले में अपना दखल जमा लेंगे...।

शेरअली - (बात काटकर) ये सब बातें फिजूल हैं, मैं जानता हूं कि अपने को बहादुर और होनहार समझते हो। मगर राजा वीरेन्द्रसिंह के प्रबल प्रताप के चमकते हुए सितारे की रोशनी को अपने हाथ की ओट लगाकर नहीं रोक सकते और न उनकी सच्चाई, सफाई और नेकियों को भूलकर इस किले का रहने वाला कोई तुम्हारा साथ ही दे सकता है। बुद्धिमानों को तो जाने दो, यहां का एक बच्चा भी राजा वीरेन्द्रसिंह का निकल जाना पसन्द न करेगा। अहा, क्या ऐसा जबान का सच्चा, रहमदिल और नेक राजा कोई दूसरा होगा यह राजा वीरेन्द्रसिंह ही का काम था कि उसने मेरे कसूरों

को माफ ही नहीं किया बल्कि इज्जत और आबरू के साथ मुझे अपना मेहमान बनाया। मेरी रग-रग में उनके एहसान का खून भरा है, मेरा बाल-बाल उन्हें दुआ देता है, मेरे दिल में उनकी हिम्मत, मर्दानगी, इन्साफ और रहमदिली का दरिया जोश मार रहा है। ऐसे बहादुर शेरदिल राजा के साथ शेरअली कभी दगाबाजी या बेईमानी नहीं कर सकता बल्कि ऐसे की ताबेदारी अपनी इज्जत हुर्मत और नामवरी का बायस समझता है। तुम मेरे दोस्त के लड़के हो मगर यह जरूर कहूंगा कि तुम्हारे बाप ने वीरेन्द्रसिंह के साथ दगाबाजी की! खैर जो कुछ हुआ सो हुआ, अब तुम तो ऐसा न करो। मैं तुम्हें पुरानी मोहब्बत और दोस्ती का वास्ता दिलाता हूं कि ऐसा मत करो। राजा वीरेन्द्रसिंह दुश्मनी करने के योग्य राजा नहीं बल्कि दर्शन करने योग्य है!! मैं वादा करता हूं कि तुम्हारा भी कसूर माफ करा दूंगा और अगर तुमको रोहतासगढ़ की लालच है तो इसे भी तुम राजा वीरेन्द्रसिंह की ताबेदारी करके ले सकते हो। वह बड़ा उदार दाता है, यह राज्य देना उनके सामने कोई बात नहीं है।

कल्याण - अफसोस! मुझे इन शब्दों के सुनने की कदापि आशा न थी जो इस समय आपके मुंह से निकल रहे हैं। मुझे इस बात का ध्यान भी न था कि आज आपको हिम्मत और मर्दानगी से इस तरह खाली देखूंगा। मैं किसी के कहने पर भी विश्वास नहीं कर सकता था कि आपकी रग में बुजदिली का खून पाऊंगा। मुझे स्वप्न में भी इस बात का विश्वास न हो सकता था कि आज आपको उसी राजा वीरेन्द्रसिंह की खुशामद करते पाऊंगा जिसके लड़के ने आपकी लड़की को हर तरह से बेइज्जत किया।

शेरअली - ओफ, तुम्हारी जली-कटी बातें मेरे दिल को हिलाकर मुझे बेईमान, दगाबाज या विश्वासघाती की पदवी नहीं दिला सकतीं। उस गौहर की याद मेरे दिल की सच्ची तथा इन्साफ पसन्द आंखों को फोड़कर नेकों की दुनिया में मुझको अन्धा नहीं बना सकती जो बुजुर्गों की इज्जत को मिट्टी में मिला मेरी बदनामी का झंडा बन जहरीली हवा में उड़ती हुई आसमान की तरफ बढ़ती ही जाती थी और जिसका गिरफ्तार होकर सजा पाना बल्कि इस दुनिया से उठ जाना मुझे पसन्द है। किसी नालायक के लिए लायक के साथ बुराई करना, किसी अधर्मी के लिए धर्मी का खून करना, किसी बेईमान के लिए ईमान का सत्यानाश करना और किसी अविश्वासी के लिए विश्वासघात करना शेरअलीखां का काम नहीं है। मैं समझता था कि तुम्हारे दिल का प्याला सच्ची बहादुरी की शराब से भरा हुआ होगा और तुम दुनिया में नामवरी पैदा कर सकोगे, इसलिए मैं तुम्हारी सिफारिश करने वाला था, मगर अब निश्चय हो गया कि तुम्हारी किस्मत का जहाज शिवदत्त के तूफान में पड़कर एक

भारी पहाड़ से टक्कर खाया चाहता है, अस्तु तुम यहां से चले जाओ और मुझसे किसी तरह की उम्मीद मत रक्खो, अगर मैं तुम्हारे बाप का दोस्त न होता और तुम मेरे दोस्त के लड़के न होते तो...।

कल्याण - अफसोस मैं इस समय आपकी यह लम्बी-चौड़ी वक्तृता नहीं सुन सकता, क्योंकि समय कम है और काम बहुत करना है, बस आप इतना ही बताइए कि मैं आपसे किसी तरह की आशा रक्खूं या नहीं?

शेरअली - नहीं, बल्कि इस बात की भी आशा मत रक्खो कि तुम्हें राजा वीरेन्द्रसिंह के साथ दुश्मनी करते देखकर मैं चुपचाप बैठा रहूंगा।

कल्याण **-** (क्रोध में आकर) क्या आप मेरी मदद न करेंगे तो चुपचाप भी न बैठे रहेंगे?

शेरअली - हरगिज नहीं!

कल्याण - तो आप मेरे साथ दुश्मनी करेंगे?

शेरअली - अगर ऐसा करें तो हर्ज ही क्या है जिसकी लोग इज्जत करते हों या जिसे दुनिया मोहब्बत की निगाह से देखती हो उसके साथ दुश्मनी करना बेशक बुरा है, मगर ऐसे के साथ बेमुरौवती करने में कुछ भी हर्ज नहीं है जिसके हृदय की आंख फूट गई हो, जिसे दुनिया में किसी तरह की इज्जत हासिल करने का शौक न हो और जिसे लोग हमदर्दी की निगाह से देखते हों।

कल्याण **-** (दांत पीसकर) तो फिर सबसे पहिले मुझे आप ही का बन्दोबस्त करना पड़ेगा!!

इसके पहिले कि कल्याणसिंह की बात का शेरअलीखां कुछ जवाब दे बाहर से एक आवाज आई - "हां यदि तेरे किए कुछ हो सके!"

इस आवाज ने दोनों को चौंका दिया मगर कल्याणसिंह ने ज्यादे देर तक राह देखना मुनासिब न जाना और कोठरी की तरफ बढ़कर जोर से ताली बजाई। शेरअलीखां समझ गया कि कल्याणसिंह अपने साथियों को बुला रहा है क्योंकि वह थोड़ी ही देर पहिले कह चुका था कि मेरे साथ सौ सिपाही भी आए हैं जो हुक्म देने के साथ ही इस कोठरी में से मेरी ही तरफ निकल सकते हैं।

कल्याणसिंह ताली बजाता हुआ कोठरी की तरफ बढ़ा और उसका मतलब समझकर शेरअलीखां ने भी शीघ्रता से कमरे का दरवाजा अपने मददगारों को बुलाने की नीयत से खोल दिया तथा उसी समय एक नकाबपोश को हाथ में खंजर लिए कमरे के अन्दर पैर रखते देखा। शेरअलीखां ने पूछा, "तुम कौन हो' नकाबपोश ने जवाब दिया, "तुम्हारा मददगार!"

इससे ज्यादे बातचीत करने का मौका न मिला क्योंकि कोठरी के अन्दर से कई आदमी हाथ में नंगी तलवार लिये हुए निकले दिखाई दिए जिन्हें कल्याणसिंह ने अपनी मदद के लिए बुलाया था।

बयान **- 4**

अब हम अपने पाठकों को कुंअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह की तरफ ले चलते हैं जिन्हें जमानिया के तिलिस्म में नहर के किनारे पत्थर की चट्टान पर बैठकर राजा गोपालसिंह से बातचीत करते छोड़ आए हैं।

दोनों कुमार बड़ी देर तक राजा गोपालसिंह से बातचीत करते रहे। राजा साहब ने बाहर का सब हाल दोनों भाइयों के कहा और यह भी कहा कि किशोरी और कामिनी राजी-खुशी के साथ कमलिनी के तालाब वाले मकान में जा पहुंचीं, अब उनके लिए चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं है।

किशोरी और कामिनी का शुभ समाचार सुनकर दोनों भाई बड़े प्रसन्न हुए। राजा गोपालसिंह से इन्द्रजीतसिंह ने कहा, "हम चाहते हैं कि इस तिलिस्म से बाहर होकर पहिले अपने मां-बाप से मिल आवें क्योंकि उनका दर्शन किए बहुत दिन हो गए और वे भी हमारे लिए बहुत उदास होंगे।"

गोपाल - मगर यह तो हो नहीं सकता।

इन्द्र - सो क्यों?

गोपाल - जब तक आप बाहर जाने के लिए रास्ता न बना लेंगे बाहर कैसे जायंगे और जब तक इस तिलिस्म को आप तोड़ न लेंगे तो बाहर जाने का रास्ता कैसे मिलेगा?

इन्द्र - जिस राह से आप यहां आए हैं या आप जायंगे उसी रास्ते से आपके साथ अगर हम लोग भी चले जायें तो कौन रोक सकता है?

गोपाल - वह रास्ता केवल मेरे ही आने-जाने के लिए है, आप लोगों के लिए नहीं।

इन्द्र - (हंसकर) क्योंकि आपसे हम लोग मोटे-ताजे ज्यादे हैं, दरवाजे में अंट न सकेंगे!

गोपाल - (हंसकर) आप भी बड़े मसखरे हैं, मेरा मतलब यह नहीं है कि मैं जान-बूझकर आपको नहीं ले जाता बल्कि यहां के नियमों का ध्यान करके मैंने ऐसा कहा था, आपने तिलिस्मी किताब में पढ़ा ही होगा।

इन्द्र - हां हम पढ़ तो चुके हैं और उससे यह मालूम भी होता है कि हम लोग बिना तिलिस्म तोड़े बाहर नहीं जा सकते, मगर अफसोस यही है कि उस किताब का लिखने वाला हमारे सामने मौजूद नहीं है। अगर होता तो पूछते कि क्यों नहीं जा सकते जिस राह से राजा साहब आए उसी राह से उनके साथ जाने में क्या हर्ज है

गोपाल - किसी तरह का हर्ज होगा तभी तो बुजुर्गों ने ऐसा लिखा है! कौन ठिकाना किसी तरह की आफत आ जाये तो जनम भर के लिए मैं बदनाम हो जाऊंगा, अस्तु आपको भी इसके लिए जिद न करनी चाहिए, हां यदि अपने उद्योग से आप बाहर जाने का रास्ता बना लें तो बेशक चले जायं।

इन्द्र - (मुस्कुराकर) बहुत अच्छा आप जाइये, हम अपने लिए रास्त ढूंढ़ लेंगे।

गोपाल - (हंसकर) मेरे पीछे-पीछे चलकर! अच्छा आइए।

यह कहकर गोपालसिंह उठ खड़े हुए और उसी कुएं पर चले गए जिसमें पहिले दफे उस वक्त कूदकर गायब हो गये थे जब बुड्ढे की सूरत बनकर आए थे। दोनों कुमार भी मुस्कुराते हुए उनके पीछे-पीछे गए और पास पहुंचने के पहिले ही उन्होंने राजा गोपालसिंह को कुएं के अन्दर कूद पड़ते देखा। यह कुआं यद्यपि बहुत चौड़ा था तथापि नीचे के हिस्से में सिवाय अंधकार के और कुछ भी दिखाई न देता था। दोनों कुमार भी जल्दी से उसी कुएं पर गए और बारी - बारी से कुछ विलम्ब करके कुएं के अन्दर कूद पड़े।

हम पहिले आनन्दसिंह का हाल लिखते हैं जो इन्द्रजीतसिंह के बाद उस कुएं में कूदे थे। आनन्दसिंह सोचे हुए थे कि कुएं में कूदने के बाद अपने भाई से मिलेंगे मगर ऐसा न हुआ। जब उनका पैर जमीन पर लगा तो उन्होंने अपने को नर्म-नर्म घास पर पाया जिसकी ऊंचाई या तौल का अन्दाज नहीं कर सकते थे और उसी के सबब से

उन्हें चोट की तकलीफ भी बिल्कुल उठानी न पड़ी। अंधकार के सबब से कुछ मालूम न पड़ता था इसलिए दोनों हाथ आगे बढ़ाकर कुंअर आनन्दसिंह उस कुएं में घूमने लगे। तब मालूम हुआ कि नीचे से यह कुआं बहुत चौड़ा है और उसकी दीवार चिकनी तथा संगीन है। टटोलते और घूमते हुए एक छोटे से बन्द दरवाजे पर इनका हाथ पड़ा, वहां ठहर गये और कुछ सोचकर आगे बढ़े। तीन-चार कदम के बाद फिर एक बन्द दरवाजा मिला, उसे भी छोड़ और आगे बढ़े। इसी तरह घूमते हुए इन्हें चार दरवाजे मिले जिनमें दो तो खुले हुए थे और दो बन्द। आनन्दसिंह ने सोचा कि बेशक इन्हीं दोनों दरवाजों में से जो खुले हुए हैं किसी एक दरवाजे में कुंअर इन्द्रजीतसिंह गये होंगे। बहुत सोचने-विचारने के बाद आनन्दसिंह ने भी एक दरवाजे के अन्दर पैर रक्खा मगर दो ही चार कदम आगे गए होंगे कि पीछे से दरवाजा बन्द होने की आवाज आई। उस समय उन्हें विश्वास हो गया कि हमने धोखा खाया, कुंअर इन्द्रजीतसिंह किसी दूसरे दरवाजे के अन्दर गये होंगे और वह दरवाजा भी उनके जाने के बाद इसी तरह बन्द हो गया होगा। अफसोस करते हुए आगे की तरफ बढ़े मगर दो ही चार कदम जाने के बाद अंधकार के सबब से जी घबरा गया। उन्होंने कमर से तिलिस्मी खंजर निकालकर कब्जा दबाया जिससे बहुत तेज रोशनी हो गई और वहां की हर एक चीज साफ-साफ दिखाई देने लगी। कुमार ने अपने को एक कोठरी में पाया जिसमें चारों तरफ दरवाजे थे। उनमें एक दरवाजा तो वही था जिससे कुमार आये थे और बाकी तीन दरवाजे बन्द थे और उनकी कुंडियों में ताला लगा हुआ था मगर उस दरवाजे में कोई ताला या ताले का निशान या जंजीर न थी जिससे कुमार आये थे। चारों तरफ की संगीन दीवारों में कई बड़े-बड़े सूराख थे जिनमें से हवा आती और निकल जाती थी। जिस दरवाजे से कुमार आए थे उसके पास जाकर उसे खोलना चाहा मगर किसी तरह से वह दरवाजा न खुला, तब दूसरे दरवाजे के पास आये, तिलिस्मी खंजर से उसकी जंजीर काटकर दरवाजा खोला और उसके अन्दर गए। यह कोठरी बनिस्बत पहिले के तिगुनी लम्बी थी। जमीन और दीवार संगमर्मर की बनी हुई थी और हवा आने-जाने के लिए दीवारों में सूराख भी थे[1] इस कमरे के बीचोंबीच में एक ऊंचा चबूतरा था और उस पर एक बड़ा सन्दूक जो असल में बाजा था रक्खा हुआ था। कुमार के अन्दर आते ही वह बाजा बजने लगा और उसकी सुरीली आवाज ने कुमार का दिल अपनी तरफ खेंच लिया। चारों तरफ दीवारों में बड़ी-बड़ी तस्वीरें लगी हुई थीं जिनमें एक तस्वीर बहुत ही बड़ी और जड़ाऊ चौखटे के अन्दर थी। इस तस्वीर में किसी तरह की चमक देखकर कुमार ने अपने खंजर की रोशनी बन्द कर दी। उस समय मालूम हुआ कि यहां की सब तस्वीरें इस तरह चमक रही हैं कि उनके देखने के लिए किसी तरह की रोशनी की दरकार नहीं। कुमार उस

बड़ी तस्वीर को गौर से देखने लगे। देखा कि जड़ाऊ सिंहासन पर एक बूढ़े महाराज बैठे हुए हैं। उम्र अस्सी वर्ष से कम न होगी, सफेद, लम्बी दाढ़ी नाभी तक लटक रही है, जड़ाऊ मुकुट माथे पर चमक रहा है, कपड़ों के सुन्दर बेलों में मोती और जवाहिरात के फूल और बेल-बूटे बने हुए हैं। सामने सोने की चौकी पर एक ग्रन्थ रक्खा हुआ है और पास ही सिंहासन पर मृगछाला बिछाए एक बहुत ही वृद्ध साधु महाशय बैठे हुए हैं जिनके भाव से साफ मालूम होता है कि महात्माजी ग्रन्थ का मतलब महाराज को समझा रहे हैं और महाराज बड़े गौर से सुन रहे हैं। उस तस्वीर के नीचे यह लिखा हुआ था -

'महाराज सूर्यकान्त और उनके गुरु सोमदत्त जिन्होंने इस तिलिस्म को बनाया और इसके कई हिस्से किये। महाराज के दो लड़के थे। एक का नाम धीरसिंह, दूसरे का नाम जयदेवसिंह। जब इस हिस्से की उम्र समाप्त होने पर आवेगी तब धीरसिंह के खानदान में गोपालसिंह और जयदेवसिंह के खानदान में इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह होंगे और नाते में वे तीनों भाई होंगे। इसलिए उसके दो हिस्से किये गए जिनमें से आधे का मालिक गोपालसिंह होगा और आधे के मालिक इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह होंगे। लेकिन यदि उन तीनों में मेल न होगा तो इस तिलिस्म से सिवाय हानि के किसी को भी फायदा न होगा, अतएव चाहिए कि वे तीनों भाई आपस में मेल रक्खें और इस तिलिस्म से फायदा उठावें। इन तीनों के हाथ से इस तिलिस्म के कुल बारह दर्जों में से सिर्फ तीन टूटेंगे और बाकी के नौ दर्जों के मालिक उन्हीं के खानदान में कोई दूसरे होंगे। इसी तिलिस्म में से कुंअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह को एक ग्रन्थ प्राप्त होगा जिसकी बदौलत वे दोनों भाई चर्णाद्रि (चुनारगढ़) के तिलिस्म को तोड़ेंगे...।'

इसके बाद कुछ और भी लिखा हुआ था मगर अक्षर इतने बारीक थे कि पढ़ा नहीं जाता था। यद्यपि उनके पढ़ने का शौक आनन्दसिंह को बहुत हुआ मगर लाचार होकर रह गए। उस तस्वीर के बाईं तरफ जो तस्वीर थी उसके नीचे केवल 'धीरसिंह' लिखा हुआ था और दाहिनी तरफ वाली तस्वीर के नीचे 'जयदेवसिंह' लिखा हुआ था। उन दोनों की तस्वीरें नौजवानी के समय की थीं। उसके बाद क्रमशः और भी तस्वीरें थीं और सभी के नीचे नाम लिखा हुआ था।

1. हर एक कोठरी या कमरों में जहां-जहां दोनों कुमार गए थे दीवारों में सूराख देखे जिनसे हवा आने के लिए रास्ता था।

कुंअर आनन्दसिंह बाजे की सुरीली आवाज सुनते जाते थे और तस्वीरों को भी देखते जाते थे। जब इन तस्वीरों को देख चुके तो अन्त में राजा गोपालसिंह, अपनी और अपने भाई की तस्वीर भी देखी और इस काम में उन्हें कई घंटे लग गए।

इस कमरे में जिस दरवाजे से कुंअर आनन्दसिंह गये थे उसी के ठीक सामने एक दरवाजा और था जो बन्द था और उसकी जंजीर में ताला लगा हुआ था। जब वे घूमते हुए उस दरवाजे के पास गए तब मालूम हुआ कि इसकी दूसरी तरफ से कोई आदमी उस दरवाजे को ठोकर दे रहा है या खोलना चाहता है। कुमार को इन्द्रजीसिंह का खयाल हुआ और सोचने लगे कि ताज्जुब नहीं कि किसी राह से घूमते-फिरते भाई साहब यहां तक आ गए हों। यह खयाल उनके दिल में बैठ गया और उन्होंने तिलिस्मी खंजर से उस दरवाजे की जंजीर काट डाली। दरवाजा खुल गया और एक औरत कमरे में अन्दर आती हुई दिखाई दी जिसके हाथ में एक लालटेन थी और उसमें तीन मोमबत्तियां जल रही थीं। यह नौजवान और हसीन औरत इस लायक थी कि अपनी सुघराई, खूबसूरती, नजाकत, सादगी और बांकपन की बदौलत जिसका दिल चाहे मुट्ठी में कर ले। यद्यपि उसकी उम्र सत्रह-अठारह वर्ष से कम न होगी मगर बुद्धिमानों की बारीक निगाह जांचकर कह सकती थी कि इसने अभी तक मदनमहीप की पंचरंगी वाटिका में पैर नहीं रक्खा और इसकी रसीली कली को समीर के सत्संग से गुदागुदाकर खिल जाने का अवसर नहीं मिला, इसके सतीत्व की अनमोल गठरी पर किसी ने लालच में पड़कर मालिकाना दखल जमाने की नीयत से हाथ नहीं डाला और न इसने अपनी अनमोल अवस्था का किसी के हाथ सट्टा-ठीका या बीमा किया। इसके रूप के खजाने की चौकसी करने वाली बड़ी-बड़ी आंखों के निचले हिस्से में अभी तक ऊदी डोरी पड़ने नहीं पाई थी और न उसकी गर्दन में स्वर-घंटिका का उभार ही दिखाई देता था। इस गोरी नायिका को देखकर कुंअर आनन्दसिंह भौंचक्के रह गए और ललचाई निगाह से देखने लगे। इस औरत ने भी इन्हें एक दफे तो नजर भरकर देखा मगर साथ ही गर्दन नीची कर ली और पीछे की तरफ हटने लगी तथा धीरे-धीरे कुछ दूर जाकर किसी दीवार या दरवाजे की ओट में हो गई जिससे उस जगह फिर अंधेरा हो गया। आनन्दसिंह आश्चर्य, लालच और उत्कंठा के फेर में पड़े रहे, इसलिए खंजर की रोशनी की सहायता से दरवाजा लांघकर वे भी उसी तरफ गए जिधर वह नाजनीन गई थी। अब जिस कमरे में कुंअर आनन्दसिंह ने पैर रक्खा वह बनिस्बत तस्वीरों वाले कमरे के कुछ बड़ा था और उसके दूसरे सिरे पर भी वैसा ही एक दूसरा दरवाजा था जैसा तस्वीर वाले कमरे में था। कुंअर साहब बिना इधर-उधर देखे उस दरवाजे तक चले गये मगर जब उस पर हाथ रक्खा तो बन्द पाया। उस दरवाजे में कोई जंजीर या ताला दिखाई न दिया जिसे

खोल या तोड़कर दूसरी तरफ जाते। इससे मालूम हुआ कि इस दरवाजे का खोलना या बन्द करना उस दूसरी तरफ वाले के अधीन है। बड़ी देर तक आनन्दसिंह उस दरवाजे के पास खड़े होकर सोचते रहे मगर इसके बाद जब पीछे की तरफ हटने लगे तो उस दरवाजे के खोलने की आहट सुनाई दी। आनन्दसिंह रुके और गौर से देखने लगे। इतने ही में एक आवाज इस ढंग की आई जिसने आनन्दसिंह को विश्वास दिला दिया कि उस तरफ की जंजीर किसी ने तलवार या खंजर से काटी है। थोड़ी ही देर बाद दरवाजा खुला और कुंअर इन्द्रजीतसिंह दिखाई पड़े। आनन्दसिंह को उस औरत के देखने की लालसा हद से ज्यादे थी और कुछ-कुछ विश्वास हो गया था कि अबकी दफे पुनः उसी औरत को देखेंगे मगर उसके बदले में अपने बड़े भाई को देखा और देखते ही खुश होकर बोले, "मैंने तो समझा था कि आपसे जल्द मुलाकात न होगी परन्तु ईश्वर ने बड़ी कृपा की!"

इन्द्र - मैं भी यही सोचे हुए था, क्योंकि कुएं के अन्दर कूदने के बाद जब मैंने एक दरवाजे में पैर रक्खा तो दो-चार कदम जाने के बाद वह बन्द हो गया, तभी मैंने सोचा कि अब आनन्द से मुलाकात होना कठिन है।

आनन्द - मेरा भी यही हाल हुआ, जिस दरवाजे के अन्दर मैंने पैर रक्खा था वह भी दो-चार कदम जाने के बाद बन्द हो गया था।

इसके बाद कुंअर इन्द्रजीतसिंह उस कमरे में चले आये जिसमें आनन्दसिंह थे, दोनों भाई एक-दूसरे से मिलकर बहुत खुश हुए और यों बातचीत करने लगे -

आनन्द - इस कोठरी में आपने किसी को देखा था?

इन्द्र **-** (ताज्जुब से) नहीं तो!

आनन्द - बड़े आश्चर्य की बात है! (कोठरी के अन्दर झांककर) कोठरी तो बहुत बड़ी नहीं है।

इन्द्र - तुम किसे पूछ रहे हो सो कहो?

आनन्द - अभी-अभी एक औरत हाथ में लालटेन लिए मुझे दिखाई दी थी जो इसी कोठरी में घुस गई और इसके थोड़ी ही देर बाद आप आये हैं।

इन्द्र - जब से मैं कुएं में कूदा तब से इस समय तक मैंने किसी दूसरे की सूरत नहीं देखी।

आनन्द - अच्छा यह कहिये कि आप जब कुएं में कूदे तब क्या हुआ और यहां क्योंकर पहुंचे

इन्द्र - कुएं की तह में पहुंचकर जब मैं टटोलता हुआ दीवार के पास पहुंचा तो एक छोटे से दरवाजे पर हाथ पड़ा। मैं उसके अन्दर चला गया। दो ही चार कदम गया था कि पीछे से दरवाजा बन्द हो जाने की आवाज आई। मैंने तिलिस्मी खंजर हाथ में ले लिया और कब्जा दबाकर रोशनी करने के बाद चारों तरफ देखा तो मालूम हुआ कि कोठरी बहुत छोटी है और सामने की तरफ एक दरवाजा और है। खंजर से जंजीर काटकर दरवाजा खोला तो एक कमरा और नजर आया जिसकी लम्बाई पचीस हाथ से कुछ ज्यादे थी। मगर उस कमरे में जो कुछ मैंने देखा कहने योग्य नहीं है बल्कि इस योग्य है कि तुम्हें अपने साथ ले जाकर दिखाऊं। वह कमरा बहुत दूर भी नहीं है। (जिस कोठरी में से आये थे उसे बताकर) इस कोठरी के बाद ही वह कमरा है। चलो तो वहां का विचित्र तमाशा तुम्हें दिखावें।

आनन्द - पहिले इस कमरे को देख लीजिये जिसकी सैर मैं कर चुका हूं।

इन्द्र - मैं समझ गया, जरूर तुमने भी कोई अनूठा तमाशा देखा होगा। (रुककर) अच्छा, चलो पहिले इसी को देख लें।

इतना कहकर आनन्दसिंह के पीछे-पीछे इन्द्रजीतसिंह उस कमरे में गए और जो कुछ उनके छोटे भाई ने देखा था उसे उन्होंने भी बड़े गौर और ताज्जुब के साथ देखा।

इन्द्र - मुझे यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि राजा गोपालसिंह नाते में हमारे भाई होते हैं (कुछ सोचकर) मगर इस बात की सच्चाई का कोई और सबूत भी होना चाहिए।

आनन्द - जब इतना मालूम हुआ है तब और भी कोई न कोई सबूत मिल ही जायेगा।

इन्द्र - अच्छा अब हमारे साथ आकर उस कमरे का तमाशा देखो जिसका जिक्र हम कर चुके हैं और इसके बाद सोचो कि हम लोग यहां से क्योंकर निकल सकेंगे क्योंकि जिस राह से यहां आये हैं वह तो बन्द ही हो गई।

आनन्द - जी हां हम दोनों भाइयों को धोखा हुआ, गोपालसिंहजी के साथ कोई भी न जा सका।

इन्द्र - यह कैसे निश्चय हो कि हम लोगों ने धोखा खाया कदाचित् गोपालसिंहजी इसी राह से आते-जाते हों या यहां से बाहर होने के लिए कोई दूसरा ही रास्ता हो!

आनन्द - यह भी हो सकता है। मगर बड़े आश्चर्य की बात है कि खून से लिखी किताब में जिसे हम लोग अच्छी तरह पढ़ चुके हैं, इस जगह तथा इन तस्वीरों का हाल कुछ भी नहीं लिखा है।

इन्द्रजीतसिंह इसका कुछ जवाब न देकर यहां से रवाना हुआ ही चाहते थे कि बाजे की सुरीली आवाज (जो इस कमरे में बोल रहा था) बन्द हो गई और दो-चार पल तक बन्द रहने के बाद पुनः इस ढंग से बोलने लगी जैसे कोई मनुष्य बोलता हो। दोनों कुमारों ने चौंककर उस पर ध्यान दिया तो 'सुनो-सुनो' की आवाज सुनाई पड़ी अर्थात् उस बाजे में से 'सुनो-सुनो' की आवाज आ रही थी। दोनों कुमार उत्कंठा के साथ उसके पास गए और ध्यान देकर सुनने लगे। 'सुनो-सुनो' की आवाज बहुत देर तक निकलती रही, जिस पर इन्द्रजीतसिंह ने यह कहकर कि 'निःसन्देह यह तो कोई मतलब की बात कहेगा' - अपने जेब से एक सादी किताब और जस्ते की कलम निकाली और लिखने के लिए तैयार हो गए। अपना खंजर कमर में रख लिया और आनन्दसिंह को अपने खंजर का कब्जा दबाकर रोशनी करने के लिए कहा। थोड़ी देर तक और 'सुनो-सुनो' की आवाज आती रही और फिर सन्नाटा हो गया। कई पल के बाद फिर धीरे-धीरे आवाज आने लगी और इन्द्रजीतसिंह लिखने लगे। वह आवाज यह थी -

साकरा खति गलि घस्मड़ तो चड़ छनेज

काझ खञ या लठ नड कढ रोण औत

रथ इद सध तिन लिप स्मफ कीब ताभ

लीम किय सीर चल लब तीश फिष

रस तीह' से कप्रा खप्तग कघ

रोड़ इच सछ बाज जेझ में अवेट

सठ बड बांढ तेंण भत रीथ हैंद

जिध नन कीप तुफ म्हेंव जभ रूम

रथ तर हैल ताब लीश लष गास

याह' कक रोख औग रध सुड़

नाच कछ रोज अझ गञ रट एठ

कड हीढ दण फेत सुथ न दनेध सेन

सप मफ झब में भन म आय वेर

तोल दोव हश राष कस यह' के

क भीख सुग नघ सड़ कच तेछ हौज

इझ सञ कीट तठ कींड बढ़ औण

रत ताथ लीद इध सीन कष मफ

रेब में भहै म ढूंय ढोर।

इसके बाद बाजे का बोलना बन्द हो गया और फिर किसी तरह की आवाज न आई। कुंअर इन्द्रजीतसिंह जो कुछ लिख चुके थे उस पर गौर करने लगे। यद्यपि वे बातें बेसिर-पैर की मालूम हो रही थीं मगर थोड़ी ही देर में उनका मतलब इन्द्रजीतसिंह समझ गए, तब आनन्दसिंह को समझाया तो वे भी बहुत खुश हुए और बोले, "अब कोई हर्ज नहीं, हम लोगों का कोई काम अटका न रहेगा, मगर वाह रे कारीगरी!"

इन्द्र - निःसन्देह ऐसी ही बात है, मगर जब तक हम लोग उस ताली को पा न लें इस कमरे के बाहर न होना चाहिए, कौन ठिकाना अगर किसी तरह दरवाजा बन्द हो गया और यहां आ न सके तो बड़ी मुश्किल होगी।

आनन्द - मैं भी यही मुनासिब समझता हूं।

इन्द्र - अच्छा तब इस तरफ आओ।

इतना कहकर कुंअर इन्द्रजीतसिंह उस बड़ी तस्वीर की तरफ बढ़े और आनन्द सिंह उनके पीछे चले।

उस आवाज का मतलब जो बाजे में से सुनाई दी थी इस जगह लिखने की कोई आवश्यकता नहीं जान पड़ती क्योंकि हमारे पाठक यदि उन शब्दों पर जरा भी गौर करेंगे तो मतलब समझ जायेंगे कोई कठिन बात नहीं है।

बयान **- 5**

कल्याणसिंह के ताली बजाने के साथ ही बहुत से आदमी हाथों में नंगी तलवारें लिये हुए उसी कोठरी में से निकल आये जिसमें से कल्याणसिंह निकला था, मगर शेरअलीखां की मदद के लिए केवल एक ही नकाबपोश उस कमरे में था जो दरवाजा खोलने के साथ ही उन्हें दिखाई दिया था। विशेष बातचीत का समय तो न मिला मगर नकाबपोश ने इतना शेरअलीखां से अवश्य कह दिया कि, "आप अपनी मदद के लिए अभी किसी को न बुलाइए, इन लोगों के लिए अकेला मैं ही बहुत हूं, यदि मेरी बात का आपको विश्वास न हो तो जल्दी से इस कमरे के बाहर हो जाइए।"

यद्यपि सैकड़ों आदमियों के मुकाबले में केवल एक नकाबपोश का इतना बड़ा हौसला दिखाना विश्वास करने योग्य न था मगर शेरअलीखां खुद भी जवांमर्द और दिलेर आदमी था, इस सबब से या शायद और किसी सबब से उसने नकाबपोश की बातों पर विश्वास कर लिया और किसी को बुलाने के लिए उद्योग न करके अपने बिछावन के नीचे से तलवार निकालकर लड़ने के लिए स्वयम् भी तैयार हो गया।

यह नकाबपोश असल में भूतनाथ था जो सर्यूसिंह के कहे मुताबिक शेरअलीखां के पास आया था। उसे विश्वास था कि शेरअलीखां कल्याणसिंह की मदद के लिए तैयार हो जायेगा मगर जब उसने कमरे के बाहर से उन दोनों की बातें सुनीं और शेरअलीखां को नेक, ईमानदार, इन्साफपसन्द और सच्चा बहादुर पाया तो बहुत प्रसन्न हुआ और जी जान से उसकी मदद करने के लिए तैयार हो गया। हमारे पाठक यह तो जानते ही हैं कि भूतनाथ के पास भी कमलिनी का दिया हुआ एक तिलिस्मी खंजर है जिसे भूतनाथ पर कई तरह का शक और मुकद्दमा कायम होने पर भी कमलिनी ने अपनी बात को याद करके अभी तक नहीं लिया था। आज उसी खंजर की बदौलत भूतनाथ ने इतना बड़ा हौसला किया और बेईमानों के हाथ से शेरअलीखां को बचा लिया।

जिस समय कल्याणसिंह ने भूतनाथ का मुकाबिला करना चाहा, उस समय भूतनाथ ने फुर्ती से अपने चेहरे की नकाब उलट दी और ललकारकर कहा, "आज बहुत दिनों पर तुम लोग भूतनाथ के सामने आये हो, जरा समझकर लड़ना।"

इतना कहकर भूतनाथ ने तिलिस्मी खंजर से दुश्मनों पर हमला किया, इस नीयत से कि किसी की जान भी न जाय और सब के सब गिरफ्तार कर लिये जायें।

सबसे पहिले उसने खंजर का एक साधारण हाथ कल्याणसिंह पर लगाया जिससे उसकी दाहिनी कलाई जिसमें नंगी तलवार का कब्जा था कटकर जमीन पर गिर पड़ी, साथ ही इसके तिलिस्मी खंजर की तासीर ने उसके बदन में बिजली पैदा कर दी और बेहोश होकर जमीन पर गिर पड़ा।

जिस समय कल्याणसिंह और उसके साथियों ने भूतनाथ का नाम सुना उसी समय उनकी हिम्मत का बंटवारा हो गया, आधी हिम्मत तो लाचारी के हिस्से में पड़कर उनके पास रह गई और आधी हिम्मत उनके उत्साह के साथ निकलकर वायुमण्डल की तरफ पधार गई। भूतनाथ चाहे परले सिरे का बहादुर हो या न हो मगर उसके कर्मों ने उसका नाम बहादुरी और ऐयारी की दुनिया में बड़े रोब और दाब के साथ मशहूर कर रक्खा था। चाहे कैसा ही बहादुर और दिलेर आदमी क्यों न हो मगर अपने मुकाबले में भूतनाथ का नाम सुनते ही उसकी हिम्मत टूट जाती थी। यहां भी वही मामला हुआ और दुश्मनों की पस्तहिम्मती ने उनकी किस्मत का फैसला भी शीघ्र ही कर दिया।

जिस समय कल्याणसिंह बेहोश होकर जमीन पर गिरा, उसी समय एक सिपाही ने भूतनाथ पर तलवार का वार किया। भूतनाथ ने उसे तिलिस्मी खंजर पर रोका और उसके बाद खंजर उसके बदन से छुला दिया जिसका नतीजा यह निकला कि दुश्मन की तलवार दो टुकड़े हो गई और वह बेहोश होकर जमीन पर गिर पड़ा। इसी बीच में बहादुर शेरअलीखां ने दो सिपाहियों को जान से मार गिराया जिन्होंने उस पर हमला किया था, निःसन्देह कल्याणसिंह के साथी इतने ज्यादे थे कि शेरअलीखां को मार डालते या गिरफ्तार कर लेते मगर भूतनाथ की मुस्तैदी ने ऐसा होने न दिया। उस कमरे में खुलकर लड़ने की जगह न थी और इस सबब से भी भूतनाथ को फायदा ही पहुंचा। जितनी देर में शेरअलीखां ने अपनी हिम्मत और मर्दानगी से चार आदमियों को बेकाम किया उतनी देर में भूतनाथ की चालाकी और फुर्ती की बदौलत तीस आदमी बेहोश होकर जमीन पर गिर पड़े। भूतनाथ के बदन पर भी हल्के दो-चार जख्म लगे, साथ ही इसके भूतनाथ को इस बात का भी विश्वास हो गया कि शेरअलीखां जो कई जख्म खा चुका था ज्यादा देर तक इन लोगों के मुकाबले में ठहर न सकेगा, अतएव उसने सोचा कि जहां तक जल्द हो सके इस लड़ाई का फैसला कर ही देना चाहिए, ताज्जुब नहीं कि अपने साथियों को गिरते देख दुश्मनों का जोश बढ़

जाये, मगर उधर तो मामला ही दूसरा हो गया। अपने साथियों को बिना जख्म खाये गिरते और बेहोश होते देख दुश्मनों को बड़ा ही ताज्जुब हुआ और उन्होंने सोचा कि भूतनाथ केवल ऐयार, बहादुर और लड़ाका ही नहीं है बल्कि किसी देवता का प्रबल इष्ट भी रखता है जिससे ऐसा हो रहा है। इस खयाल के आने के साथ ही उन लोगों ने भागने का इरादा किया मगर ताज्जुब की बात थी कि वह रास्ता जिधर से वे लोग आये थे एकदम बन्द हो गया था। इस सबब से पीठ दिखाकर भागने वालों की जान पर भी आफत आई। इधर तो शेरअलीखां की तलवार ने कई सिपाहियों का फैसला किया और इधर भूतनाथ ने तिलिस्मी खंजर का कब्जा दबाया जिससे बिजली की तरह चमक पैदा हुई और भागने वालों की आंखें एकदम बन्द हो गईं। फिर क्या था, भूतनाथ ने थोड़ी ही देर में तिलिस्मी खंजर की बदौलत बाकी बचे हुओं को भी बेहोश कर दिया और उस समय गिनती करने पर मालूम हुआ कि दुश्मन सिर्फ पैंतालीस आदमी थे। कल्याणसिंह ने यह बात झूठ कही थी कि मेरे साथ सौ सिपाही इस मकान में मौजूद हैं या आया ही चाहते हैं।

इतनी बड़ी लड़ाई और कोलाहल का चुपचाप निपटारा होना असम्भव था। गुलशोर, मार-काट और धरो-पकड़ो की आवाज ने मकान के बाहर तक खबर पहुंचा दी। पहरे वाले सिपाहियों में से एक सिपाही ऊपर चढ़ आया और यहां का हाल देख घबराकर नीचे उतर आया और अपने साथियों को खबर की। उसी समय यह बात चारों तरफ फैल गई और थोड़ी ही देर में राजा वीरेन्द्रसिंह के बहुत-से सिपाही शेरअलीखां के कमरे में आ मौजूद हुए। उस समय लड़ाई खत्म हो चुकी थी और शेरअलीखां तथा भूतनाथ जिसने पुनः अपने चेहरे पर नकाब डाल ली थी बेहोश, जख्मी और मरे हुए दुश्मनों को खुशी की निगाहों से देख रहे थे। शेरअलीखां ने राजा वीरेन्द्रसिंह के आदमियों को देखकर कहा, "तहखाने की एक गुप्त राह से राजा वीरेन्द्रसिंह का दुश्मन कल्याणसिंह इतने आदमियों को लेकर बुरी नीयत से यहां आया था मगर (भूतनाथ की तरफ इशारा करके) इस बहादुर की मदद से मेरी जान बच गई और राजा वीरेन्द्रसिंह का भी कुछ नुकसान न हुआ। अब तुम लोग जहां तक जल्द हो सके जिनमें जान है उन्हें कैदखाने भेजवाने का और मुर्दों के जलवा देने का बन्दोबस्त करो और कमरे को भी साफ कर दो।"

इसके बाद उस कोठरी में जिसमें से कल्याणसिंह और उसके साथी लोग निकले थे ताला बन्द करके शेरअलीखां भूतनाथ का हाथ पकड़े हुए कमरे के बाहर सहन में निकल आया और एक किनारे खड़ा होकर बातचीत करने लगा।

शेरअली - इस समय आपके आ जाने से केवल मेरी जान ही नहीं बची बल्कि राजा वीरेन्द्रसिंह का भी बहुत कुछ फायदा हुआ, हां यह तो कहिये आप यहां कैसे आ पहुंचे किसी ने रोका नहीं!

भूत - मुझे कोई भी नहीं रोक सकता। तेजसिंह ने मुझे एक ऐसी चीज दे रक्खी है जिसकी बदौलत मैं राजा वीरेन्द्रसिंह की हुकूमत के अन्दर महल छोड़कर जहां चाहे वहां जा सकता हूं। कोई रोकने वाला नहीं। यहां मेरा आना कैसे हुआ इसका जवाब भी देता हूं। मुझे और इन्द्रदेव के ऐयार सर्यूसिंह को किसी तरह इस बात की खबर लग गई कि राजा शिवदत्त और कल्याणसिंह कैद से छूट गये हैं और बहुत से लड़ाकों को लेकर तहखाने के रास्ते से रोहतासगढ़ में पहुंच फसाद मचाया चाहते हैं। इस खबर ने हम दोनों को होशियार कर दिया। सर्यूसिंह तो दुश्मनों के साथ भेष बदले हुए तहखाने में जा घुसा और मैं बाहर से इन्तजार करने के लिए आया था। यह न समझियेगा कि मैं सीधा आप ही के पास चला आया, नहीं मैं हर तरह का इन्तजाम करने के बाद यहां आया हूं। इस समय इस किले के अन्दर वाली फौज लड़ने के लिए तैयार और मुस्तैद है, बहादुर लोग चौकन्ने और महल के सब दरवाजों पर मुस्तैद हैं। तोपें गोले उगलने के लिए तैयार हैं और ऐयारों के जाल भी हर तरह फैले हुए हैं। मगर इस बात की खबर मुझे कुछ भी नहीं है कि तहखाने के अन्दर क्या हो रहा है या क्या हुआ।

शेरअली - बेशक तहखाने के अन्दर दुश्मनों ने जरूर गहरा उत्पात मचाया होगा। अफसोस आज ही के दिन राजा वीरेन्द्रसिंह वगैरह को तहखाने के अन्दर जाना था!

भूत - इस खबर ने तो मुझे और भी बदहवास कर रक्खा है। क्या करूं तहखाने का कुछ भी भेद मुझे मालूम नहीं है और न उसके पेचीले तथा मकड़ी के जाले की तरह उलझन डालने वाले रास्तें की ही मुझे अच्छी तरह खबर है, नहीं तो इस समय मैं अवश्य तहखाने के अन्दर पहुंचता और अपनी बहादुरी तथा ऐयारी का तमाशा दिखलाता!

शेरअली - बेशक ऐसा ही है। इस समय मेरा दिल भी इस खयाल से बेचैन हो रहा है कि तहखाने के अन्दर जाकर राजा साहब की कुछ भी मदद नहीं कर सकता। अभी थोड़ी ही देर हुई जब मेरे दिल में यह बात पैदा हुई कि जिस राह से कल्याणसिंह और उसके मददगार इस कमरे में आये हैं इसी राह से हम लोग भी तहखाने के अन्दर जाकर कोई काम करें मगर बड़े ताज्जुब की बात है कि वह रास्ता बन्द हो गया।

लेकिन जहां तक मैं खयाल करता हूं यह काम कल्याणसिंह के किसी पक्षपाती का नहीं है।

भूत - मैं भी ऐसा ही समझता हूं। (कुछ सोचकर) हां एक बात और भी मेरे ध्यान में आती है।

शेरअली - वह क्या?

भूत - यह तो निश्चय हो ही गया कि हम लोग किसी तरह तहखाने के अन्दर जाकर मदद नहीं कर सकते और न इस किले में रहने में ही किसी तरह का फायदा है।

शेरअली - बेशक ऐसा ही है।

भूत - तब हमको खोह के उस मुहाने पर पहुंचना चाहिए जिस राह से दुश्मन लोग तहखाने में आये हैं। ताज्जुब नहीं कि दुश्मन लोग अपना काम करके या भाग के उसी राह से तहखाने के बाहर निकलें। यदि ऐसा हुआ तो निःसन्देह हम लोग कोई अच्छा काम कर सकेंगे।

शेरअली **-** (खुश होकर) ठीक है, बेशक ऐसा ही होगा। तो अब विलम्ब करना उचित नहीं है, चलिए और जल्दी चलिए।

भूत - चलिए मैं तैयार हूं।

इतना कहकर भूतनाथ और शेरअलीखां ने राजा वीरेन्द्रसिंह के आदमियों को लाशों को उठवाने और जिन्दों को कैद करने के विषय में पुनः समझा-बुझाकर तथा और भी कुछ कह-सुनकर किले के बाहर का रास्ता लिया और बहुत जल्द उस ठिकाने जा पहुंचे जहां के लिए इरादा कर चुके थे।

बयान **- 6**

कुंअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह फिर उस बड़ी तस्वीर के पास आये जिसके नीचे महाराज सूर्यकान्त का नाम लिखा हुआ था। दोनों कुमार उस तस्वीर पर फिर से गौर करने और उस लिखावट को पढ़ने लगे जिसे पहिले पढ़ चुके थे। हम ऊपर लिख आये हैं कि इस तस्वीर में कुछ ऐसा भी था जो बहुत बारीक हर्फों में लिखा होने के कारण कुमार से पढ़ा नहीं गया। अब दोनों कुमार उसी को पढ़ने के लिए उद्योग करने लगे क्योंकि उसका पढ़ना उन दोनों ने बहुत ही आवश्यक समझा।

इस कमरे में जितनी तस्वीरें थीं वे सब दीवार में बहुत ऊंचे पर न थीं बल्कि इतनी नीचे थीं कि देखने वाला उनके मुकाबले में खड़ा हो सकता था, यही सबब था कि महाराज सूर्यकान्त की तस्वीर में जो कुछ लिखा था उसे दोनों कुमारों ने बखूबी पढ़ लिया था मगर कुछ लेख वास्तव में बहुत ही बारीक अक्षरों में लिखा हुआ था और इसी से ये दोनों भाई उसे पढ़ न सके। दोनों भाइयों ने तस्वीर की बनावट और उसके चौखटे (फ्रेम) पर अच्छी तरह ध्यान दिया तो चारों कोनों में छोटे-छोटे चार गोल शीशे जड़े हुए दिखाई पड़े जिनमें तीन शीशे तो पतले और एक ही रंग के थे, मगर चौथा शीशा मोटा दलदार और बहुत साफ था। इन्द्रजीतसिंह ने उस मोटे शीशे पर उंगली रक्खी तो वह हिलता हुआ मालूम पड़ा और जब कुमार ने दूसरा हाथ उसके नीचे रखकर उंगली से दबाया तो चौखटे से अलग होकर हाथ में आ रहा। इस समय आनन्दसिंह तिलिस्मी खंजर हाथ में लिये हुए रोशनी कर रहे थे। उन्होंने इन्द्रजीतसिंह से कहा, "मेरा दिल गवाही देता है कि यह शीशा उन अक्षरों के पढ़ने में अवश्य कुछ सहायता देगा जो बहुत बारीक होने के सबब से पढ़े नहीं जाते।"

इन्द्र - मेरा भी यही खयाल है और इसी सबब से मैंने इसे निकाला भी है।

आनन्द - इसीलिए यह मजबूती के साथ जड़ा हुआ भी नहीं था।

इन्द्र - देखो अब सब मालूम हुआ ही जाता है।

इतना कहकर इन्द्रजीतसिंह ने उस शीशे को उन बारीक अक्षरों के ऊपर रक्खा और वे अक्षर बड़े-बड़े मालूम होने लगे। अब दोनों भाई बड़ी प्रसन्नता से उस लेख को पढ़ने लगे। यह लिखा हुआ था -

स्व गिवर नर्ग दै कै पै

खूब समझ के तब आगे पैर रक्खो

6 - 3 - अ **5 - 3 -** ए

3 - 3 - ए **8 - 4 - 0**

7 - 4 - अ **8 - 3 -** ए

7 - 3 - ए **1 - 1 - 0**

3 - 1 - औ **7 - 3 - 0**

5 - 1 - 0 2 - 3 - 0

7 - 2 - ए **6 - 5 - 0**

6 - 5 - ए **5 - 1 - 0**

5 - 1 - अ **2 - 1 - 0**

7 - 3 - ई **7 - 2 -** ओ

2 - 2 - ओ **5 - 5 - 0**

3 - 3 - ओ **8 - 4 -** ई

5 - 1 - इ **5 - 1 -** ओ

6 - 3 - 0 3 - 3 - अ

8 - 3 - 0 5 - 5 - 0

6 - 5 - ई **6 - 1 - 0**

2 - 2 - अं **7 - 2 - 0**

3 - 3 - 0 1 - 1 - आ

7 - 2 - 0 6 - 3 - 0

1 - 1 - 0 5 - 5 - ए

6 - 1 - 0 2 - 3 - ई

5 - 5 - ए **-**

थोड़ी देर तक इस लेख का मतलब समझ में न आया लेकिन बहुत सोचने पर आखिर दोनों कुमार उसका मतलब समझ गए[1] और प्रसन्न होकर आनन्दसिंह बोले -

आनन्द - देखिये तिलिस्म के सम्बन्ध में कितनी कठिनाइयां रक्खी हुई हैं!

इन्द्र - यदि ऐसा न हो तो हर एक आदमी तिलिस्म के भेद को समझ जाये।

आनन्द - अच्छा तो अब क्या करना चाहिए?

इन्द्र - सबसे पहिले बाजे की ताली खोजनी चाहिए, इसके बाद बाजे की आज्ञानुसार काम करना होगा।

दोनों भाई बाजे वाले चबूतरे के पास गये और घूम-घूमकर अच्छी तरह देखने लगे। उसी समय पीछे की तरफ से आवाज आई, "हम भी आ पहुंचे!" दोनों भाइयों ने ताज्जुब के साथ घूमकर देखा तो राजा गोपालसिंह पर निगाह पड़ी।

यद्यपि कुंअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह को राजा गोपालसिंह के साथ पहिले ही मोहब्बत हो गई थी मगर जब से यह मालूम हुआ कि रिश्ते में वे इनके भाई हैं तब से मोहब्बत ज्यादे हो गई थी और इसलिए उस समय उन्हें देखते ही इन्द्रजीतसिंह दौड़कर उनके गले से लिपट गये और उन्होंने भी बड़े प्रेम से दबाया। इसके बाद आनन्दसिंह अपने भाई की तरह गले मिले और जब अलग हुए तो गोपालसिंह ने कहा, "मालूम होता है कि महाराज सूर्यकान्त की तस्वीर के नीचे जो कुछ लिखा है उसे आप दोनों भाई पढ़ चुके हैं।"

इन्द्र - जी हां, और मालूम करके हमें बड़ी खुशी हुई कि आप हमारे भाई हैं! मगर मैं समझता हूं कि आप इस बात को पहिले ही से जानते थे।

गोपाल - बेशक इस बात को मैं बहुत दिनों से जानता हूं क्योंकि इस जगह कई दफे आ चुका हूं, लेकिन इसके अतिरिक्त तिलिस्म सम्बन्धी एक ग्रन्थ भी मेरे पास है जिसमें भी यह बात लिखी हुई है।

आनन्द - तो इतने दिनों तक आपने हम लोगों से कहा क्यों नहीं?

गोपाल - उस किताब में जो मेरे पास है ऐसा करने की मनाही थी। मगर अब मैं कोई बात आप लोगों से नहीं छिपा सकता और न आप ही मुझसे छिपा सकते हैं।

इन्द्र - क्या आप इसी राह से आते-जाते हैं और आज भी इसी राह से हम लोगों को छोड़कर निकल गये थे

1. पाठकों के सुभीते के लिए इन दोनों मजमूनों का आशय इस भाग के अन्तिम पृष्ठ पर दे दिया गया है , पर उन्हें अपनी चेष्टा से मतलब समझने की कोशिश अवश्य करनी चाहिए।

गोपाल - नहीं-नहीं, मेरे आने-जाने का रास्ता दूसरा ही है। उस कुएं में आपने कई दरवाजे देखे होंगे, उनमें से जो सबसे छोटा दरवाजा है मैं उसी राह से आता-जाता हूं। यहां दूसरे ही काम के लिए कभी-कभी आना पड़ता है।

इन्द्र - यहां आने की आपको क्या जरूरत पड़ा करती है?

गोपाल - इधर तो मुद्दत से मैं आफत में फंसा हुआ था, आप ही ने मेरी जान बचाई है, इसलिए दो दफे से ज्यादे आने की नौबत नहीं आई, हां इसके पहिले महीने में एक दफे अवश्य आता और इन कमरों की सफाई अपने हाथ से करनी पड़ती थी। जो किताब मेरे पास है और जिसका जिक्र मैंने अभी किया उसके पढ़ने से इस तिलिस्म का कुछ हाल और जमानिया की गद्दी पर बैठने वालों के लिए बड़े लोग जो-जो आज्ञा और नियम लिख गए हैं आपको मालूम होगा। उसी नियमानुसार हर महीने की अमावस्या को मैं यहां आया करता था। आपकी, आनन्दसिंह की और अपनी तस्वीरें मैंने ही नियमानुसार इस कमरे में लगाई हैं और इसी तरह बड़े लोग अपने-अपने समय में अपनी और अपने भाइयों की तस्वीरें गुप्त रीति से तैयार कराके इस कमरे में रखते चले आए हैं। नियमानुसार यह एक आवश्यक बात थी कि जब तक आप लोग स्वयं इस कमरे में न आ जायं मैं हर एक बात आप लोगों से छिपाऊं और इसीलिए मैं इस तिलिस्म के बाहर भी आपको ले नहीं गया जबकि आपने बाहर जाने की इच्छा प्रकट की थी, मगर अब कोई बात छुपाने की आवश्यकता न रही।

इन्द्र - इस बाजे का हाल भी आपको मालूम होगा?

गोपाल - केवल इतना ही कि इसमें तिलिस्म के बहुत से भेद भरे हुए हैं मगर इसकी ताली कहां है सो मैं नहीं जानता।

इन्द्र - क्या आपके सामने यह बाजा कभी बोला?

गोपाल - इस बाजे की आवाज कई दफे मैंने सुनी है। (जमीन में गड़े एक पत्थर की तरफ इशारा करके) इस पर पैर पड़ने के साथ ही बाजा बजने लगता है, दो-तीन गत के बाद कुछ बातें कहता और फिर चुप हो जाता है, अगर इस पत्थर पर पैर न पड़े तो कुछ भी नहीं बोलता।

इन्द्र **-** (वह किताब जिस पर बाजे की आवाज लिखी थी दिखाकर) यह आवाज भी आपने सुनी होगी?

गोपाल - हां सुन चुका हूं मगर इसके लिए उद्योग करना सबसे पहिले आपका काम है।

आनन्द - महाराज सूर्यकान्त की तस्वीर के नीचे बारीक अक्षरों में जो कुछ लिखा है उसे भी आप पढ़ चुके हैं?

गोपाल - नहीं, क्योंकि अक्षर बहुत बारीक हैं, पढ़े नहीं जाते।

इन्द्र - हम लोग इसे पढ़ चुके हैं!

गोपाल **-** (ताज्जुब से) सो कैसे?

कुंअर इन्द्रजीतसिंह ने शीशे वाला हाल गोपालसिंह से कहा और जिस तरह स्वयम् उन बारीक अक्षरों को पढ़ चुके थे उसी तरह उन्हें भी पढ़ाया।

गोपाल - आखिर समय ने इस बात को आप लोगों के लिए रख ही छोड़ा था।

इन्द्र - इसका मतलब आप समझ गये?

गोपाल - जी हां समझ गया।

इन्द्र - अब आप हम लोगों को बड़ाई के शब्दों से सम्बोधन न किया कीजिए क्योंकि आप बड़े हैं और हम लोग छोटे हैं इस बात का पता लग चुका है।

गोपाल **-** (हंसकर) ठीक है, अब ऐसा ही होगा, अच्छा तो बाजे वाले चबूतरे में से ताली निकालनी चाहिए।

इन्द्र - जी हां हम लोग इसी फिक्र में थे कि आप आ पहुंचे, लेकिन मुझे और भी बहुत-सी बातें आपसे पूछनी हैं।

गोपाल - खैर पूछ लेना, पहिले ताली के काम से छुट्टी पा लो।

आनन्द - मैंने इस कमरे में एक औरत को आते हुए देखा था मगर वह मुझ पर निगाह पड़ने के साथ ही पिछले पैर लौट गई और दूसरी कोठरी में जाकर गायब हो गई। इस बात का पता न लगा कि वह कौन थी या यहां क्यों आई?

गोपाल - औरत! यहां पर!!

आनन्द - जी हां।

गोपाल - यह तो एक आश्चर्य की बात तुमने कही! अच्छा खुलासा कह जाओ।

आनन्दसिंह अपना हाल खुलासा बयान कर गये जिसे सुनकर गोपालसिंह को बड़ा ही ताज्जुब हुआ और वे बोले, "खैर थोड़ी देर के बाद इस पर गौर करेंगे। किसी औरत का यहां आना निःसन्देह आश्चर्य की बात है।"

इन्द्र - (खून से लिखी किताब दिखाकर) मेरी राय है कि आप किताब को पढ़ जायें और जो तिलिस्मी किताब आपके पास है उसे पढ़ने के लिए मुझे दे दें।

गोपाल - निःसन्देह वह किताब पढ़ने लायक है, उससे आपको बहुत फायदा पहुंचेगा और खाने-पीने तथा समय पड़ने पर इस तिलिस्म से बाहर निकल जाने के लिए अण्डस न पड़ेगी और यहां के कई गुप्त भेद भी आप लोगों को मालूम हो जायेंगे। आप इस बाजे की ताली निकालने का उद्योग कीजिए, तब तक मैं जाकर वह किताब ले आता हूं।

इन्द्र - बहुत अच्छी बात है, मगर बाजे की ताली निकालने के समय आप यहां मौजूद क्यों नहीं रहते आपसे बहुत कुछ मदद हम लोगों को मिलेगी।

गोपाल - क्या हर्ज है, ऐसा ही सही, आप लोग उद्योग करें।

यह तो मालूम हो ही चुका था कि बाजे की ताली उसी चबूतरे में है जिस पर बाजा रक्खा या जड़ा हुआ है, अस्तु तीनों भाई उसी चबूतरे की तरफ बढ़े। राजा गोपालसिंह के पास भी तिलिस्मी खंजर मौजूद था जिसे उन्होंने हाथ में ले लिया और कब्जा दबाकर रोशनी करने के बाद कहा, "आप दोनों आदमी उद्योग करें मैं रोशनी दिखाता हूं।"

आनन्द - (आश्चर्य से) आप भी अपने पास तिलिस्मी खंजर रखते हैं।

गोपाल - हां इसे प्रायः अपने पास रखता हूं और जब तिलिस्म के अन्दर आने की आवश्यकता पड़ती है तब तो अवश्य ही रखना पड़ता है क्योंकि बड़े लोग ऐसा करने के लिए लिख गए हैं।

कुंअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह दोनों भाई बाजे वाले चबूतरे के चारों तरफ घूमने और उसे ध्यान देकर देखने लगे। वह चबूतरा किसी प्रकार की धातु का और

चौखूटा बना हुआ था। उसके दो तरफ तो कुछ भी न था मगर बाकी दो तरफ मुट्ठे लगे हुए थे, जिन्हें देख इन्द्रजीतसिंह ने आनन्दसिंह से कहा, "मालूम होता है कि ये दोनों मुट्ठे पकड़कर खींचने के लिए बने हुए हैं।"

आनन्द - मैं भी यही समझता हूं।

इन्द्र - अच्छा खेंचो तो सही।

आनन्द - (मुट्ठे को अपनी तरफ खेंच और घुमाकर) यह तो अपनी जगह से हिलता नहीं! मालूम होता है कि हम दोनों को एक साथ उद्योग करना पड़ेगा और इसीलिए इसमें दो मुट्ठे बने हुए हैं।

इन्द्र - बेशक ऐसा ही है, अच्छा हम भी दूसरे मुट्ठे को खींचते हैं। दोनों आदमियों का जोर एक साथ लगना चाहिए।

दोनों भाइयों ने आमने-सामने खड़े होकर दोनों मुट्ठों को खूब मजबूती से पकड़ा और बायें-दाहिने दोनों तरफ उमेठा मगर वह बिलकुल न घूमा। इसके बाद दोनों ने उन्हें अपनी तरफ खींचा और कुछ खिंचते देखकर दोनों भाइयों ने समझा कि इसमें अपनी पूरी ताकत खर्च करनी पड़ेगी। आखिर ऐसा ही हुआ अर्थात् दोनों भाइयों के खूब जोर करने पर वे दोनों मुट्ठे खिंचकर बाहर निकल आये और इसके साथ ही उस चूबतरे की एक तरफ की दीवार (जिधर मुट्ठा नहीं था) पल्ले की तरह खुल गई। राजा गोपालसिंह ने झुककर उसके अन्दर तिलिस्मी खंजर की रोशनी दिखाई और तीनों भाई बड़े गौर से अन्दर देखने लगे। एक छोटी-सी चौकी नजर आई जिस पर छोटी-सी तांबे की तख्ती के ऊपर एक चाभी रक्खी हुई थी। इन्द्रजीतसिंह ने अन्दर की तरफ हाथ बढ़ाकर चौकी खेंचना चाही मगर वह अपनी जगह से न हिली, तब उन्होंने तांबे की तख्ती और ताली उठा ली और पीछे की तरफ हटकर उस खुले हुए पल्ले को बन्द करना चाहा मगर वह भी बन्द न हुआ, लाचार उसी तरह छोड़ दिया। तांबे की तख्ती पर दोनों भाइयों ने निगाह डाली तो मालूम हुआ कि उस पर बाजे में ताली लगाने की तर्कीब लिखी हुई है और ताली वही है जो उस तख्ती के साथ थी।

गोपाल - (इन्द्रजीतसिंह से) ताली तो आपको मिल ही गई है मगर मैं उचित समझता हूं कि थोड़ी देर के लिए आप लोग यहां से चलकर बाहर की हवा खाएं और सुस्ताने के बाद फिर जो कुछ मुनासिब समझें करें।

इन्द्र - हां मेरी भी यही इच्छा है। इस बन्द जगह में बहुत देर तक रहने से तबियत घबरा गई और सिर में चक्कर आ रहा है।

आनन्द - मेरी भी यही हालत है और प्यास बड़े जोर की मालूम होती है।

गोपाल - बस तो इस समय यहां से चले चलना ही बेहतर है। हम आप लोगों को एक बाग में ले चलते हैं जहां पर हर तरह का आराम मिलेगा और खाने-पीने का भी सुभीता होगा!

इन्द्र - बहुत अच्छा चलिये, किस रास्ते से चलता होगा

गोपाल - उसी राह से जिससे आप आये हैं।

इन्द्र - तब तो वह कमरा भी आनन्द के देखने में आ जायेगा जिसे मैं स्वयं इन्हें दिखाया चाहता था, अच्छा चलिये।

राजा गोपालसिंह अपने दोनों भाइयों को साथ लिये हुए वहां से रवाना हुए और उस कोठरी में गये जिसमें से आनन्दसिंह ने अपने भाई इन्द्रजीतसिंह का आते देखा था। उस जगह इन्द्रजीतसिंह ने राजा गोपालसिंह से कहा, "क्या आप इसी राह से यहां आते थे! मुझे तो इस दरवाजे की जंजीर खंजर से काटनी पड़ी थी!"

गोपाल - ठीक है, मगर हम इस ताले को हाथ लगाकर मामूली इशारे से खोल लिया करते थे।

आनन्द - इस तिलिस्म में जितने ताले हैं क्या वे सब इशारे ही से खुला करते हैं या किसी खटके पर हैं?

गोपाल - सब तो नहीं मगर कई ऐसे ताले हैं जिनका हाल हमें मालूम है।

इतना कह गोपालसिंह आगे बढ़े और उस विचित्र कमरे में पहुंचे जिसके बारे में इन्द्रजीतसिंह ने आनन्दसिंह से कहा था कि उस कमरे में जो कुछ मैंने देखा सो कहने योग्य नहीं बल्कि इस योग्य है कि तुम्हें अपने साथ ले चलकर दिखाऊं।

वास्तव में वह कमरा ऐसा ही था और उसके देखने से आनन्दसिंह को भी बड़ा ही आश्चर्य हुआ। मगर अवश्य ही राजा गोपालसिंह के लिए कोई नई बात न थी क्योंकि वे कई दफे उस कमरे को देख चुके थे। तिलिस्मी खंजर की तेज रोशनी के कारण वहां

की कोई चीज ऐसी न थी जो साफ-साफ दिखाई न देती हो और इसीलिए वहां की सब चीजों को दोनों भाइयों ने खूब ध्यान देकर देखा।

इस कमरे की लम्बाई लगभग पचीस हाथ के होगी और यह इतना ही चौड़ा भी होगा। चारों कोनों में चार जड़ाऊ सिंहासन रक्खे हुए थे और उन पर बड़े-बड़े चमकदार, हीरे, मानिक, पन्ने और मोतियों के ढेर लगे हुए थे। उनके नीचे सोने की थालियों में कई प्रकार के जड़ाऊ जेवर रक्खे हुए थे जो औरतों और मर्दों के काम में आ सकते थे। चारों सिंहासनों के बगल से लोहे के महराबदार खम्भे निकले हुए थे जो कमरे के बीचोंबीच में आकर डेढ़ पुर्से की ऊंचाई पर मिल गये थे और उनके सहारे एक आदमी लटक रहा था जिसके गले में लोहे की जंजीर फांसी के ढंग पर लगी हुई थी। देखने से यही मालूम होता था कि यह आदमी इस तौर पर फांसी पर लटकाया गया है। उस आदमी के नीचे एक हसीन औरत सिर के बाल खोले इस ढंग से बैठी हुई थी जैसे उस लटकते हुए आदमी का मातम कर रही हो, तथा उसके पास ही दूसरी औरत हाथ में लालटेन लिए खड़ी थी जिसे देखने के साथ ही आनन्दसिंह बोल उठे, "यह वही औरत है जिसे मैंने उस कमरे में देखा और जिसका हाल आप लोगों से कहा था, फर्क केवल इतना ही है इस समय इसके हाथ वाली लालटेन बुझी हुई है।"

गोपाल - तुम भी तो अनोखी बात कहते हो, भला ऐसा कभी हो सकता है।

आनन्द - हो सके चाहे न हो सके मगर यह औरत निःसन्देह वही है जिसे मैं देख चुका हूं, अगर आपको विश्वास न हो तो इससे पूछकर देखिये।

गोपाल **-** (हंसकर) क्या तुम इसे सजीव समझते हो?

आनन्द - तो क्या यह निर्जीव है?

गोपाल - बेशक ऐसा ही है। तुम इसके पास जाओ और हिला-डुलाकर देखो।

आनन्दसिंह उस औरत के पास गए और कुछ देर तक खड़े होकर देखते रहे मगर बड़ों के लिहाज से यह सोचकर हाथ नहीं लगाते थे कि कहीं यह सजीव न हो। राजा गोपालसिंह इनका मतलब समझ गये और स्वयं उस पुतली के पास जाकर बोले, "खाली देखने से पता न लगेगा, इसे हिला-डुला और ठोंककर देखो!"

इतना कह उन्होंने उस पुतली के सिर पर दो-तीन चपत जमाईं जिससे एक प्रकार की आवाज पैदा हुई जैसे किसी धातु की पोली चीज को ठोंकने से निकलती है। उस

समय आनन्दसिंह का शक दूर हुआ और वे बोले, "निःसन्देह यह निर्जीव है, मगर वह औरत भी ठीक वैसी ही थी, डौल-डौल, रंग-ढंग, कपड़ा-लत्ता किसी बात में फर्क नहीं है! ईश्वर जाने क्या मामला है!"

गोपाल - ईश्वर जाने क्या भेद है! परन्तु जब से तुमने यह बात कही है हमारे दिल को एक खुटका-सा लग गया है, जब तक उसका ठीक-ठीक पता न लगेगा जी को चैन न पड़ेगा, खैर इस समय तो यहां से चलना चाहिए।

राजा गोपालसिंह उस लटकते हुए आदमी के पास गए और उसका एक पैर पकड़कर नीचे की तरफ दो-तीन झटका दिया, तब वहां से हटकर इन्द्रजीतसिंह के पास चले आये। झटका देने के साथ ही वह आदमी जोर-जोर से झोंके खाने लगा और कमरे में किसी तरह की भयानक आवाज आने लगी, मगर यह नहीं मालूम होता था कि आवाज कहां से आ रही है, हर तरफ वह भयानक आवाज गूंज रही थी। यह हालत चौथाई घड़ी तक रही। इसके बाद जोर की आवाज हुई और सामने की तरफ एक छोटा-सा दरवाजा खुला हुआ दिखाई दिया। उस समय कमरे में किसी तरह की आवाज सुनाई न देती थी, हर तरह से सन्नाटा हो गया था।

दोनों भाइयों को साथ लिए राजा गोपालसिंह दरवाजे के अन्दर गए जो अभी खुला था। उसके अन्दर ऊपर चढ़ने के लिए सीढ़ियां बनी हुई थीं जिस राह से तीनों भाई ऊपर चढ़ गए और अपने को एक छोटे से नजरबाग में पाया। यह बाग यद्यपि छोटा था मगर बहुत ही खूबसूरत और सूफियाने कितने का बना हुआ था। संगर्ममर की बारीक नालियों में नहर का जल चकाबू के नक्शे की तरह घूम-फिरकर बाग की खूबसूरती को बढ़ा रहा था। खुशबूदार फूलों की महक हवा के हलके-हलके झपेटों के साथ आ रही थी, सूर्य अस्त हो चुका था। रात के समय खिलने वाली कलियों को चन्द्रदेव की आशा लग रही थी। कुंअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह बहुत देर तक अंधेरे में रहने तथा भूख-प्यास के कारण बहुत परेशान हो रहे थे। नहर के किनारे साफ पत्थर पर बैठ गये, कपड़े उतार दिये और मोती सरीखे साफ जल से हाथ-मुंह धोने के बाद दो-तीन चुल्लू जल पीकर हरारत मिटाई।

गोपाल - अब आप लोग इस बाग में बेफिक्री के साथ अपना काम करें, मैदान जायं और स्नान, संध्या-पूजा से छुट्टी पाकर बाग की सैर करें, तब तक मैं खास बाग में जाकर कुछ खाने का सामान और तिलिस्मी किताब जो मेरे पास है ले आता हूं। इस बाग में मेवे के पेड़ भी बहुतायत से हैं, यदि इच्छा हो तो आप उनके फल खाने के काम में ला सकते हैं।

इन्द्र - बहुत अच्छी बात है, आप जाइये मगर जहां तक हो सके जल्द वापिस आइएगा।

आनन्द - क्या हम लोग आपके साथ खास बाग में नहीं चल सकते?

गोपाल - क्यों नहीं चल सकते मगर मैं इस समय आप लोगों को तिलिस्म के बाहर ले जाना पसन्द नहीं करता और तिलिस्मी किताब में भी ऐसा करने की मनाही है।

इन्द्र - खैर कोई चिन्ता नहीं, आप जाइए और जल्द लौटकर आइए। जब तिलिस्मी किताब जो आपके पास है, हम लोग पढ़ लेंगे और आप भी इस 'रक्तग्रन्थ' को जो मेरे पास है पढ़ लेंगे तब जैसी राय होगी किया जायगा।

गोपाल - ठीक है, अच्छा तो अब मैं जाता हूं।

इतना कहकर राजा गोपालसिंह एक तरफ चले गये और कुंअर इन्द्रजीतसिंह तथा आनन्दसिंह जरूरी कामों से छुट्टी पाने की फिक्र में लगे।

बयान **- 7**

रात पहर भर से ज्यादे जा चुकी है। चन्द्रदेव उदय हो चुके हैं मगर अभी इतने ऊंचे नहीं उठे हैं कि बाग के पूरे हिस्से पर चांदनी फैली हुए दिखाई देती, हां बाग के उस हिस्से पर चांदनी का फर्श जरूर बिछ चुका था जिधर कुंअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह एक चट्टान पर बैठे हुए बातें कर रहे थे। ये दोनों भाई अपने जरूरी कामों से छुट्टी पा चुके थे और संध्या-वंदन करके दो-चार फलों से आत्मा को सन्तोष देकर आराम से बैठे बातें करते हुए राजा गोपालसिंह के आने का इन्तजार कर रहे थे। यकायक बाग के उस कोने में जिधर चांदनी न होने तथा पेड़ों के झुरमुट के कारण अंधेरा था दिये की चमक दिखाई पड़ी। दोनों भाई चौकन्ने होकर उस तरफ देखने लगे और दोनों को गुमान हुआ कि राजा गोपालसिंह आते होंगे मगर उनका शक थोड़ी ही देर बाद जाता रहा जब एक औरत को हाथ में लालटेन लिए अपनी तरफ आते देखा।

इन्द्र - यह औरत इस बाग में क्योंकर आ पहुंची?

आनन्द - ताज्जुब की बात है मगर मैं समझता हूं कि इसे हम दोनों भाइयों के यहां होने की खबर नहीं है, अगर होती तो इस तरह बेफिक्री के साथ कदम बढ़ाती हुई न आती।

इन्द्र - मैं भी यही समझता हूं, अच्छा हम दोनों को छिपकर देखना चाहिए यह कहां जाती और क्या करती है?

आनन्द - मेरी भी यही राय है।

दोनों भाई वहां से उठे और धीरे-धीरे चलकर पेड़ की आड़ में छिपे रहे जिसे चारों तरफ से लताओं ने अच्छी तरह घेर रक्खा था और जहां से उन दोनों की निगाह बाग के हर एक हिस्से और कोने में बखूबी पहुंच सकती थी। जब वह औरत घूमती हुई उस पेड़ के पास से होकर निकली तब आनन्दसिंह ने धीरे से कहा, "यह वही औरत है।"

इन्द्र - कौन?

आनन्द - जिसे तिलिस्म के अन्दर बाजे वाले कमरे में मैंने देखा और जिसका हाल आपसे तथा गोपाल भाई से कहा था।

इन्द्र - हां! अगर वास्तव में ऐसा है तो फिर इसे गिरफ्तार करना चाहिए।

आनन्द - जरूर गिरफ्तार करना चाहिए।

दोनों भाई सलाह करके उस पेड़ की आड़ में से निकले और उस औरत को घेरकर गिरफ्तार करने का उद्योग करने लगे। थोड़ी ही देर में नजदीक होने पर इन्द्रजीतसिंह ने भी देखकर निश्चय कर लिया कि हाथ में लालटेन लिये हुए यह वही औरत है जिसे तिलिस्म में फांसी लटकते आदमी के साथ-साथ निर्जीव खड़े देखा था।

उस औरत को भी मालूम हो गया कि दो आदमी उसे गिरफ्तार किया चाहते हैं अतएव वह चैतन्य हो गई और चमेली की टट्टियों में घूम-फिरकर कहीं गायब हो गई। दोनों भाइयों ने बहुत उद्योग और पीछा किया मगर नतीजा कुछ भी न निकला। वह औरत ऐसी गायब हुई कि कोई निशान भी न छोड़ गई, न मालूम वह चमेली की टट्टियों में लीन हो गई या जमीन के अन्दर समा गई। दोनों भाई लज्जा के साथ ही साथ निराश होकर अपनी जगह लौट आये और उसी समय राजा गोपालसिंह को भी एक हाथ में चंगेर और दूसरे हाथ में तेज रोशनी की अद्भुत लालटेन लिये हुए आते देखा। गोपालसिंह दोनों भाइयों के पास आए और लालटेन तथा चंगेर जिसमें खाने की चीजें थीं, जमीन पर रखकर इस तरह बैठ गये जैसे बहुत दूर का चला आता हुआ मुसाफिर परेशान और बदहवासी की हालत में आगे सफर करने से निराश होकर पृथ्वी की शरण लेता है, या कोई-कोई धनी अपनी भारी रकम

खो देने के बाद चोरों की तलाश से निराश और हताश होकर बैठ जाता है। इस समय राजा गोपालसिंह के चेहरे का रंग उड़ा हुआ था और वे बहुत ही परेशान और बदहवास मालूम होते थे। कुंअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह को बड़ा आश्चर्य हुआ और उन्होंने घबड़ाकर पूछा, "कहिए कुशल तो है?'

गोपाल **-** (घबड़ाहट के साथ) कुशल नहीं है।

इन्द्र - सो क्या?

गोपाल - मालूम होता है कि हमारे घर में किसी जबर्दस्त दुश्मन ने पैर रक्खा है और हमारे यहां से वह चीज ले गया जिसके भरोसे पर हम अपने को तिलिस्म का राजा समझते थे और तिलिस्म तोड़ने के समय आपको मदद देने का हौसला रखते थे।

आनन्द - वह कौन-सी चीज थी?

गोपाल - वह तिलिस्मी किताब जिसका जिक्र आप लोगों से कर चुके हैं और जिसे लाने के लिए हम इस समय गए थे।

इन्द्र **-** (रंज के साथ) अफसोस! क्या आप उसे छिपाकर नहीं रखते थे?

गोपाल - छिपाकर तो ऐसे रखते थे कि हमें वर्षों तक कैदखाने में सड़ाने और मुर्दा बनाने पर भी मुन्दर जिसने अपने को मायारानी बना रक्खा था उसे पा न सकी!

इन्द्र - तो आज वह यकायक गायब कैसे हो गई?

गोपाल - न मालूम क्योंकर गायब हो गई, मगर इतना जरूर कह सकते हैं कि जिसने यह किताब चुराई है वह तिलिस्म के भेदों से कुछ जानकार अवश्य हो गया है। इसे आप लोग साधारण बात न समझिए। इस चोरी से हमारा उत्साह भंग हो गया और हिम्मत जाती रही। हम आप लोगों को इस तिलिस्म में किसी तरह की मदद देने लायक न रहे और हमें अपनी जान जाने का भी खौफ हो गया। इतना ही नहीं सबसे ज्यादे तरद्दुद की बात तो यह है कि वह चोर आश्चर्य नहीं कि आप लोगों को भी दुःख दे।

इन्द्र - यह तो बहुत बुरा हुआ।

गोपाल - बेशक बुरा हुआ। हां यह तो बताइये इस बाग में लालटेन लिए कौन घूम रहा था

आनन्द - वही औरत जिसे मैंने तिलिस्म के अन्दर बाजे वाले कमरे में देखा था और जो फांसी लटकते हुए मनुष्य के पास निर्जीव अवस्था में खड़ी थी। (इन्द्रजीतसिंह की तरफ इशारा करके) आप भाईजी से पूछ लीजिए कि मैं सच्चा था या नहीं।

इन्द्र - बेशक उसी रंग-रूप और चाल-ढाल की औरत थी!

गोपाल - बड़े आश्चर्य की बात है! कुछ अक्ल काम नहीं करती!!

इन्द्र - हम दोनों ने उसे गिरफ्तार करने के लिए बहुत उद्योग किया मगर कुछ बन न पड़ा। इन्हीं चमेली की टट्टियों में वह खुशबू की तरह हवा के साथ मिल गई, कुछ मालूम न हुआ कि कहां चली गई!!

गोपाल **-** (घबड़ाकर) इन्हीं चमेली की टट्टियों में वहां से तो देवमन्दिर में जाने का रास्ता है जो बाग के चौथे दर्जे में है!

इन्द्र **-** (चौंककर) देखिए, देखिए, वह फिर निकली!

बयान **- 8**

इस जगह हमें भूतनाथ के सपूत लड़के तथा खुदगर्ज और मतलबी ऐयार नानक का हाल पुनः लिखना पड़ा।

हम ऊपर के किसी बयान में लिख आये हैं कि जिस समय नानक अपने मित्र की ज्याफत में तन-मन-धन और आधे शरीर से लौलीन हो रहा था उसी समय उस पर वज्रपात हुआ, अर्थात एक नकाबपोश ने उसके बाप की दुर्दशा का हाल बताकर उसे अंधे कुएं में ढकेल दिया। लोग कहते हैं कि उसे अपने बाप की मुहब्बत कुछ भी न थी, हां अपनी मां को कुछ-कुछ जरूर चाहता था, जिस पर उसकी नई-नवेली दुलहिन ने उसे कुछ ऐसा मुट्ठी में कर लिया था कि उसी को सब-कुछ तथा इष्टदेव समझे हुए था और उसकी उपासना से विमुख होना हराम समझता था। यद्यपि वह अपने बाप की कुछ परवाह नहीं रखता था और न उसको उससे कुछ प्रेम ही था मगर वह अपने बाप से डरता उतना ही था जितना लम्पट लोग काल से डरते हैं। जिस समय वह लौटकर घर आया उसकी अनोखी स्त्री थकावट और सुस्ती के कारण चारपाई का सहारा ले चुकी थी। उसने नानक से पूछा, "कहो क्या मामला है तुम कहां गये थे?'

नानक - (धीरे से) अपने नापाक बाप के आफत में फंसने की खबर सुनने गया था, अच्छा होता जो उसकी मौत की खबर सुनने में आती और मैं सदैव के लिए निश्चिन्त हो जाता।

स्त्री - (आश्चर्य से) अपने प्यारे ससुर के बारे में ऐसी बात तो आज तक तुम्हारी जुबान से कभी सुनने में न आई थी!!

नानक - क्योंकर सुनने में आती जबकि अपने इस सच्चे भाव को मैं आज तक मंत्र की तरह छिपाए हुए था आज यकायक मेरे मुंह से ऐसी बात तुम्हारे सामने निकल गई, इसके बाद फिर कभी कोई शब्द ऐसा मेरे मुंह से न निकलेगा जिससे कोई समझ जाये कि मैं अपने बाप को नहीं चाहता। तुम्हें मैं अपनी जान समझता हूं और आशा है कि इस बात की जो यकायक मेरे मुंह से निकल गई है तुम भी जान ही की तरह हिफाजत करोगी जिससे कोई सुनने न पावे। अगर कोई सुन लेगा तो मेरी बड़ी खराबी होगी क्योंकि मैं अपने बाप को यद्यपि मानता तो कुछ नहीं हूं मगर उससे डरता हूं क्योंकि वह बड़ा ही शैतान और भयानक आदमी है। यदि वह जान जायेगा कि मैं उसके साथ खुदगर्जी का बर्ताव करता हूं तो वह मुझे जान ही से मार डालेगा।

स्त्री - नहीं-नहीं, मैं ऐसी बात कभी किसी के सामने नहीं कह सकती जिससे तुम पर मुसीबत आये, (हंसकर) हां अगर तुम मुझे कभी रंज करोगे तो जरूर प्रकट कर दूंगी।

नानक - उस समय मैं लोगों से कह दूंगा कि मेरी स्त्री व्यभिचारिणी हो गई है, मुझ पर तूफान जोड़ती है। भला दुनिया में कोई भी ऐसा आदमी है जो अपने बाप को न चाहता हो यदि ऐसा होता तो क्या मैं चुपचाप बैठा रह जाता! मगर नहीं मैं अपने बाप को छुड़ाने के लिए इसी वक्त जाऊंगा और इस उद्योग में अपनी जान तक लड़ा दूंगा।

स्त्री - (मन में) ईश्वर करे तुम किसी तरह इस शहर से बाहर निकलो या किसी दूसरी दुनिया में चले जाओ। (प्रकट) जब वह फंस ही चुका है तो चुपचाप बैठे रहो, समय पड़ने पर कह देना कि मुझे खबर ही नहीं थी!

नानक - नहीं मैं ऐसा कदापि नहीं कह सकता क्योंकि गोपीकृष्ण (नकाबपोश) जिससे इस बात की मुझे खबर पहुंची है बड़ा दुष्ट आदमी है। समय पड़ने पर वह अवश्य कह देगा कि मैंने इस बात की इत्तिला नानक को दे दी थी!

स्त्री - अच्छा तुम खुलासा कह तो जाओ कि क्या-क्या खबर सुनने में आई!

नानक ने नकाबपोश की जुबानी जो कुछ सुना था अपनी प्यारी स्त्री से कहा, इसके बाद उसे बहुत कुछ समझा-बुझाकर सफर की पूरी तैयारी करके अपने बाप को छुड़ाने के फिक्र में वहां से रवाना हो गया।

भूतनाथ के संगी-साथी लोग मामूली न थे बल्कि बड़े ही बदमाश, लड़ाकू, शैतान और फसादी लोग थे, तथा चारों तरफ ऐसे ढंग से घूमा करते कि समय पड़ने पर जब भूतनाथ उन लोगों की खोज करता तो विशेष परिश्रम किए बिना ही उनमें से कोई मिल ही जाता था। इसके अतिरिक्त भूतनाथ ने अपने लिए कई अड्डे भी मुकर्रर कर लिए थे, जहां उसके संगी-साथियों में से कोई न कोई अवश्य रहा करता था और उन अड्डों में कई अड्डे ऐसे थे जिनका ठिकाना नानक को मालूम था। ऐसा ही एक अड्डा गयाजी से थोड़ी दूर पर बराबर की पहाड़ी के ऊपर था जहां अपने बाप का पता लगाता हुआ नानक जा पहुंचा। उस समय भूतनाथ के साथियों में से तीन आदमी वहां मौजूद थे।

नानक ने उन लोगों से अपने बाप का हाल पूछा और जो कुछ उन लोगों को मालूम था उन्होंने कहा। इत्तिफाक से उसी समय मनोरमा को लिये हुए भूतनाथ भी वहां आ पहुंचा और अपने सपूत लड़के को देखकर खुश हुआ। भूतनाथ ने मनोरमा को तो अपने आदमियों के हवाले किया और नानक का हाथ पकड़ के एक किनारे ले जाने के बाद जो कुछ उस पर बीता था सब ब्यौरेवार कह सुनाया।

नानक - (अफसोस के साथ मुंह बनाकर) अफसोस! आपने इन बातों की मुझे कुछ भी खबर न दी! अगर गोपीकृष्ण आपकी रोशनी-परेशानी का कुछ हाल मुझसे न कहते तो मुझे गुमान भी न होता।

भूत - खैर जो कुछ होना था वह हो गया, अब तुम मनोरमा को लेकर वहां जाओ जहां तुम्हारी मां रहती है और जिस तरह हो सके मनोरमा से पूछकर बलभद्रसिंह का पता लगाओ, मगर एक आदमी को साथ जरूर लिए जाओ क्योंकि आजकल तुम्हारी मां जिस ठिकाने रहती है यद्यपि वहां का हाल तुमसे हमने कह दिया है मगर रास्ता इतना खराब है कि बिना आदमी साथ ले गए तुम्हें कुछ भी पता न लगेगा।

नानक - जो आज्ञा, तो क्या इस समय आप सीधे रोहतासगढ़ जायेंगे?

भूत - हां जरूर जायेंगे, क्योंकि ऐसे समय में शेरअलीखां से मिलना आवश्यक है, मगर जब तक हम न आवें तुम अपनी मां के पास रहना और जिस तरह हो सके बलभद्रसिंह का पता लगाना।

इसके बाद नानक को लिये हुए भूतनाथ फिर अपने आदमियों के पास चला आया और एक आदमी को धन्नूसिंह का पता बताकर (जिसे कैद करके कहीं रख आया था) कहा कि तुम धन्नूसिंह को वहां से लाकर हमारे घर पहुंचा दो और फिर इसी ठिकाने आकर रहो।

इन कामों से छुट्टी पाने के बाद भूतनाथ रोहतासगढ़ शेरअलीखां के पास गया और वहां जो कुछ हुआ सो हमरे प्रेमी पाठक पढ़ चुके हैं।

बयान **- 9**

दोपहर का समय है। हवा खूब तेज चल रही है। मैदान में चारों तरफ बगुले उड़ते दिखाई दे रहे हैं। ऐसे समय में एक बहुत फैले हुए और गुंजान आम के पेड़ के नीचे नानक और भूतनाथ का सिपाही जिसने अपना नाम दाऊ बाबा रक्खा हुआ था, बैठे हुए सफर की हरारत मिटा रहे हैं। पास में ही मनोरमा भी बैठी है जिसके हाथ-कमन्द से बंधे हुए हैं। थोड़ी ही दूर पर एक घोड़ी चर रही थी जिसकी लम्बी बागडोर एक डाल से साथ बंधी हुई थी और जिस पर मनोरमा को लाद के वे लोग लाए थे। इस समय सफर की हरारत मिटाने और धूप का समय टाल देने के लिए वे लोग इस पेड़ के नीचे बैठे हुए बात कर रहे हैं।

नानक **-** (मनोरमा से) मुझे तुम्हारी सूरत-शक्ल पर रहम आता है, तुम नाहक ही एक बदकार और नकली मायारानी के लिए अपनी जान दे रही हो।

मनोरमा **-** (लम्बी सांस लेकर) बात ठीक है मगर अब जान बचने की कोई उम्मीद भी तो नहीं है। सच कहती हूं कि इस जिन्दगी का मजा मैंने कुछ भी नहीं पाया। मेरे पास करोड़ों रुपये की जमा मौजूद है मगर वह इस समय मेरे किसी अर्थ की नहीं, न मालूम उस पर किसका कब्जा होगा और उसे पाकर कौन आदमी अपने का भाग्यवान् मानेगा, या शायद लावारिस माल समझ राजा ही...।

नानक - तुम रोती क्यों हो, आंखें पोंछो। तुम्हारा रोना मुझे अच्छा नहीं मालूम होता। मैं सच कहता हूं कि तुम्हारी जान बच सकती है और तुम अपनी दौलत का आनन्द अच्छी तरह भोग सकती हो यदि बलभद्रसिंह और इन्दिरा का पता बता दो!

मनोरमा - मैं बलभद्रसिंह और इन्दिरा का पता भी बता सकती हूं और अपनी कुछ दौलत भी तुमको दे सकती हूं यदि मेरी जान बच जाये और तुम एक सलूक मेरे साथ करो।

नानक - वह कौन-सा सलूक है जो तुम्हारे साथ करना होगा हाय मुझे तुम्हारी सूरत पर दया आती है। मैं नहीं चाहता कि एक खूबसूरत परी दुनिया से उठ जाय।

मनोरमा - यह बात बहुत गुप्त है इसलिए मैं नहीं चाहती कि इसे सिवाय तुम्हारे कोई और सुने।

दाऊ बाबा - लो हम आप ही अलग हो जाते हैं, तुम लोग अपना मजे में बातें करो, हमें इन सब बखेड़ों से कोई मतलब नहीं, हमें तो मालिक का काम होने से मतलब है, तब तक दो-एक चिलम गांजा उड़ाके सफर की थकावट मिटाते हैं।

इतना कहकर दाऊ बाबा जो वास्तव में एक मस्त आदमी था उठकर कुछ दूर चला गया और अपने सफरी बटुए में से चकमक निकालकर सुलगाने के बाद आनन्द के साथ गांजा मलने लगा, इधर नानक उठकर मनोरमा के पास जा बैठा।

नानक - लो, कहो अब क्या कहती हो!

मनोरमा - यह तो तुम जानते ही हो कि मेरे पास बड़ी दौलत है!

नानक - हां सो खूब जानता हूं कि तुम्हारे पास करोड़ों रुपये की जमा मौजूद है!

मनोरमा - और यह भी जानते हो कि तुम्हारी प्यारी रामभोली भी मेरे ही कब्जे में है!

नानक **-** **(**चौंककर**)** नहीं सो तो मैं नहीं जानता! क्या वास्तव में रामभोली भी तुम्हारे ही कब्जे में है हाय, यद्यपि वह गूंगी और बहरी औरत है मगर मैं उसे दिल से प्यार करता हूं। यदि वह मुझे मिल जाय तो मैं अपने को बड़ा ही भाग्यवान् समझूं।

मनोरमा - हां, वह मेरे ही कब्जे में है और तुम्हें मिल सकती है। मैं अपनी तमाम दौलत भी तुम्हें देने को तैयार हूं और बलभद्रसिंह तथा इन्दिरा का पता भी बता सकती हूं यदि इन सब कामों के बदले में तुम एक उपकार मेरे साथ करो!

नानक **-** **(**खुश होकर**)** वह क्या?

मनोरमा - तुम मेरे साथ शादी कर लो, क्योंकि मैं तुम्हें जान से ज्यादे प्यार करती हूं और तुम पर मरती हूं।

नानक - यद्यपि तुम्हारी उम्र मेरे बराबर है मगर मैं तुम्हें अभी तक नई-नवेली ही समझता हूं और तुम्हें प्यार भी करता हूं क्योंकि तुम खूबसूरत हो, लेकिन तुम्हारे साथ शादी मैं कैसे कर सकता हूं, यह बात मेरा बाप कब मंजूर करेगा!

मनोरमा - इस बात से अगर तुम्हारा बाप रंज हो तो बड़ा ही बेवकूफ है। बलभद्रसिंह के मिलने से उसकी जान बचती है और इन्दिरा के मिलने से वह इन्द्रदेव का प्रेम-पात्र बनकर आनन्द के साथ अपनी जिन्दगी बितायेगा। तुम्हारे अमीर होने से भी उसको फायदा ही पहुंचेगा। इसके अतिरिक्त तुम्हारी रामभोली तुम्हें मिलेगी और मैं तुम्हारी होकर जिन्दगी भर तुम्हारी सेवा करूंगी। तुम खूब जानते हो कि मायारानी के फेर में पड़े रहने के कारण अभी तक मेरी शादी नहीं हुई।

नानक **-** (मुस्कुराकर) मगर दो-चार प्रेमियों से प्रेम जरूर कर चुकी हो!

मनोरमा - हां इस बात से मैं इनकार नहीं कर सकती, मगर क्या तुम इसी से हिचकते हो बड़े बेवकूफ हो! इस बात से भला कौन बचा है! क्या तुम्हारी अनोखी स्त्री ही जो आजकल तुम्हारे सिर चढ़ी हुई है बची है! तुम इस बारे में कसम खा सकते हो! क्या तुम दुनिया भर के भेद जानते हो और अन्तर्यामी हो! ये सब बातें तुम्हारे ऐसे खुशदिल आदमियों के सोचने लायक नहीं। हां इतना मैं प्रतिज्ञापूर्वक कह सकती हूं कि इस काम से तुम्हारा बाप कभी नाखुश न होगा। जरा ध्यान देकर देखो तो सही कि तुम्हारे बाप ने इस जिन्दगी में कैसे-कैसे काम किए हैं। उसका मुंह नहीं कि तुम्हें कुछ कह सके, और फिर दुनिया में मेरा-तुम्हारा साथ और करोड़ों रुपये की जमा क्या यह मामूली बात है! हमसे-तुमसे बढ़कर भाग्यवान् कौन दिखाई दे सकता है! हां इस बात की भी मैं कसम खाती हूं कि तुम्हारी आजकल वाली स्त्री और रामभोली से सच्चा प्रेम करूंगी और चाहे ये दोनों मुझसे कितना ही लड़ें मगर मैं उनकी खातिर ही करूंगी।

मनोरमा की मीठी-मीठी और दिल लुभा देने वाली बातों ने नानक को ऐसा बेकाबू कर दिया कि वह स्वर्ग-सुख का अनुभव करने लगा। थोड़ी देर तक चुप रहने के बाद उसने कहा, "मगर इस बात का विश्वास कैसे हो कि जितनी बात तुम कह गई हो उसे अवश्य पूरा करोगी!"

इसके जवाब में मनोरमा ने हजारों कसमें खाईं और नानक के मन में अपनी बात का विश्वास पैदा कर दिया। इसके बाद उसने अपना हाथ-पैर खोल देने के लिए नानक से कहा। नानक ने उसका हाथ-पैर खोल दिया और मनोरमा ने अपनी उंगली से वह

जहरीली अंगूठी जिसको निकाल लेना भूतनाथ भूल गया था उतारकर नानक की उंगली में पहिरा देने के बाद नानक का मुंह चूमकर कहा, "इसी समय से मैंने तुम्हें अपना पति मान लिया। अब तुम मेरे घर चलो, बलभद्रसिंह और इन्दिरा को लेकर अपने बाप के पास भेज दो, मेरे घरबार के मालिक बनो और इसके बाद जो कुछ कहो मैं करने को तैयार हूं। अब इससे बढ़कर सन्तोष दिलाने वाली बात मैं क्या कह सकती हूं!!"

इतना कहकर मनोरमा ने नानक के गले में हाथ डाल दिया और पुनः उसका मुंह चूमकर कहा, "प्यारे, मैं तुम्हारी हो चुकी, अब तुम जो चाहो करो!"

अहा, स्त्री भी दुनिया में क्या चीज है! बड़े-बड़े होशियारों, चालाकों, ऐयारों, अमीरों, पहलवानों और बहादुरों को बेवकूफ बनाकर मटियामेट कर देने की शक्ति जितनी स्त्री में है उतनी किसी में नहीं। इस दुनिया में वह बड़ा ही भाग्यवान् है जिसके गले में दुष्टा और धूर्त स्त्री की फांसी नहीं लगी। देखिए दुर्दैव के मारे कम्बख्त नानक ने क्या मुंह की खाई है और धूर्ता मनोरमा ने कैसा उसका मुंह काला किया। मजा तो यह है कि स्त्री रत्न पाने के साथ ही दौलत भी पाने की खुशी ने उसे और भी अन्धा बना दिया। जिस समय मनोरमा ने जहरीली अंगूठी नानक की उंगली में पहिराकर उसके गुण की प्रशंसा की उस समय तो नानक को निश्चय हो गया कि बस यह हमारी हो चुकी। उसने सोचा कि इसे अपनाने में अगर भूतनाथ रंज भी हो जाय तो कोई परवाह की बात नहीं है और रंज होने का सबब ही क्या है बल्कि उसे तो खुश होना चाहिए क्योंकि मेरे ही सबब से उसकी जान बचेगी।

नानक ने भी मनोरमा के गले में हाथ डालके उससे कुछ ज्यादे ही प्रेम का बर्ताव किया जो मनोरमा ने नानक के साथ किया था और तब कहा, "अच्छा तो अब मैं भी तुम्हारा हो चुका, तुम भी जहां तक जल्द हो सके अपना वायदा पूरा करो।"

मनोरमा - मैं तैयार हूं, अपने साथी लण्ठाधिराज को बिदा करो और मेरे साथ जमानिया के तिलिस्मी बाग की तरफ चलो।

नानक - वहां क्या है?

मनोरमा - बलभद्रसिंह और इन्दिरा उसी में कैद हैं, पहले उन्हें छुड़ाकर तुम्हारे बाप को खुश करना मैं उचित समझती हूं।

नानक - हां यह राय बहुत अच्छी है मैं अभी अपने साथी को समझा-बुझाकर बिदा करता हूं।

इतना कहकर नानक अपने साथी के पास चला गया जो गांजे का दम लगा रहा था। मनोरमा का हाल नमक-मिर्च लगाकर उससे कहा और समझा-बुझाकर उसी अड्डे पर जहां से आया था जाने के लिए राजी किया बल्कि उसे बिदा करके पुनः मनोरमा के पास चला आया।

मनोरमा - तुम्हारा साथी तो सहज ही में चला गया।

नानक - आखिर वह मेरे बाप का नौकर ही तो है, अस्तु जो कुछ मैं कहूंगा उसे मानना ही पड़ेगा, हां तो अब तुम भी चलने के लिए तैयार हो जाओ।

मनोरमा **-** (खड़ी होकर) मैं तैयार हूं, आओ।

नानक - ऐसे नहीं, मेरे बटुए में कुछ खाने की चीजें मौजूद हैं, लोटा-डोरी भी तैयार है, वह देखो सामने कुआं भी है, अस्तु कुछ खा-पीकर आत्मा को हरा कर लेना चाहिए, जिसमें सफर की तकलीफ मालूम न पड़े।

मनोरमा - जो आज्ञा।

नानक ने बटुए में से कुछ खाने को निकाला और कुएं में से जल खींचकर मनोरमा के सामने रक्खा।

मनोरमा - पहिले तुम खा लो फिर तुम्हारा जूठा जो बचेगा उसे मैं खाऊंगी।

नानक - नहीं-नहीं, ऐसा क्या, तुम भी खाओ और मैं भी खाऊं!

मनोरमा - ऐसा कदापि न होगा, अब मैं तुम्हारी स्त्री हो चुकी और सच्चे दिल से हो चुकी, फिर जैसा मेरा धर्म है वैसा ही करूंगी।

नानक ने बहुत कहा मगर मनोरमा ने कुछ भी न सुना। आखिर नानक को पहिले खाना पड़ा। थोड़ा-सा खाकर नानक ने जो कुछ छोड़ दिया मनोरमा उसी को खाकर चलने के लिए तैयार हो गई। नानक ने घोड़ा कसा और दोनों आदमी उसी पर सवार होकर जंगल ही जंगल पूरब की तरफ चल निकले। इस समय जिस राह से मनोरमा कहती थी नानक उसी राह से जाता था। शाम होते-होते ये दोनों उसी खंडहर के पास पहुंचे जिसमें हम पहिले भूतनाथ और शेरसिंह का हाल लिख आए हैं। जहां राजा

वीरेन्द्रसिंह को शिवदत्त ने घेर लिया था, जहां से शिवदत्त को रूहा ने चकमा देकर फंसाया था, या जिसका हाल ऊपर कई दफे लिखा जा चुका है।

मनोरमा - अब यहां ठहर जाना चाहिए!

नानक - क्यों?

मनोरमा - यह तो आपको मालूम हो ही चुका होगा कि इस खंडहर में से एक सुरंग जमानिया के तिलिस्मी बाग तक गई हुई है।

नानक - हां इसका हाल मुझे अच्छी तरह मालूम हो चुका है। इसी सुरंग की राह से मायारानी या उसके मददगारों ने पहुंचकर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह के साथ और भी कई आदमियों को गिरफ्तार कर लिया था।

मनोरमा - तो अब मैं चाहती हूं कि उसी राह से जमानिया वाले तिलिस्मी बाग के दूसरे दर्जे में पहुंचूं और दोनों कैदियों को इस तरह निकालकर बाहर करूं कि किसी को किसी तरह का गुमान न होने पावे। मैं इस सुरंग का हाल अच्छी तरह जानती हूं, इस राह से कई दफे आई और गई हूं। इतना ही नहीं बल्कि इस सुरंग की राह से जाने में और भी एक बात का सुभीता है।

नानक - वह क्या?

मनोरमा - इस सुरंग में बहुत-सी चीजें ऐसी हैं जिन्हें हम लोग हजारों रुपये खर्चने और वर्षों परेशान होने पर भी नहीं पा सकते और वे चीजें हम लोगों के बड़े काम की हैं, जैसे ऐयारी के काम में आने लायक तरह-तरह की रोशनी पोशाकें जो न तो पानी में भीगें और न आग में जलें। एक से एक बढ़के मजबूत और हलके कमन्द, पचासों तरह के नकाब, तरह-तरह की दवाइयां, पचासों किस्म के अनमोल इत्र जो अब मयस्सर नहीं हो सकते। इनके अतिरिक्त ऐश व आराम की भी सैकड़ों चीजें तुमको दिखाई देंगी जिन्हें अपने साथ लेते चलेंगे, (धीरे से) और मायारानी का एक 'जवाहिरखाना' भी इस सुरंग में है।

नानक - वाह-वाह, तब तो जरूर इसी सुरंग की राह चलना चाहिए, इससे बढ़कर 'एक पन्थ दो काज' हो ही नहीं सकता!

मनोरमा - और इन सब चीजों की बदौलत हम लोग अपनी सूरत भी अच्छी तरह बदल लेंगे और दो-चार हर्बे भी ले लेंगे।

नानक - ठीक है, मैं इस राह से जाने के फायदों को अच्छी तरह समझ गया मगर हर्बों की हमें कुछ भी जरूरत नहीं है क्योंकि कमलिनी का दिया हुआ एक खंजर ही मेरे पास ऐसा है जिसके सामने हजारों-लाखों बल्कि करोड़ों हर्बे झख मारें!!

मनोरमा - (आश्चर्य से) सो क्या वह कैसा खंजर है और कहां है?

नानक - (खंजर दिखाकर) यह मेरे पास मौजूद है, जिस समय तुम इसके गुण सुनोगी तो आश्चर्य करोगी।

इतना कहकर नानक घोड़े से नीचे उतर पड़ा और सहारा देकर मनोरमा को भी नीचे उतारा। मनोरमा ने एक पेड़ के नीचे बैठ जाने की इच्छा प्रकट की और कहा कि घोड़े को छोड़ देना चाहिए क्योंकि इसकी अब हम लोगों को जरूरत नहीं रही।

नानक ने मनोरमा की बात मंजूर की अर्थात् घोड़े को छोड़ दिया और कुछ देर तक आराम लेने की नीयत से दोनों आदमी एक पेड़ के नीचे बैठ गये। मनोरमा ने तिलिस्मी खंजर का गुण पूछा और नानक ने शेखी के साथ बखान करना शुरू किया और अन्त में खंजर का कब्जा दबाकर बिजली की रोशनी भी पैदा कर मनोरमा को दिखायी। चमक से मनोरमा की आंखें चौंधियां गईं और उसने दोनों हाथों से अपना मुंह ढांप लिया। जब वह चमक बन्द हो गई तो नानक के कहने से मनोरमा ने आंखें खोलीं और खंजर की तारीफ करने लगी।

थोड़ी देर तक आराम करने के बाद दोनों आदमी खण्डहर के अन्दर गये और उसी मामूली रास्ते से जिसका हाल कई दफे लिखा जा चुका है, उसी तहखाने के अन्दर गए जिसमें शेरसिंह रहा करते थे या जिसमें से इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह गायब हुए थे। यह तो पाठकों को मालूम ही है कि राजा वीरेन्द्रसिंह की सवारी आने के कारण इस खण्डहर की अवस्था कुछ बदल गई थी और अभी तक बदली हुई है मगर इस तहखाने की हालत में किसी तरह का फर्क नहीं पड़ा था।

हमारे पाठक भूले न होंगे कि इस तहखाने में उतरने के लिए जो सीढ़ियां थीं उनके नीचे एक छोटी-सी कोठरी थी जिसमें शेरसिंह अपना असबाब रक्खा करते थे और जिसमें से आनन्दसिंह, कमला और तारासिंह गायब हुए थे। मनोरमा की आज्ञानुसार नानक ने अपने ऐयारी के बटुए में से मोमबत्ती निकालकर जलाई और मनोरमा के पीछे-पीछे उस कोठरी में गया। यह कोठरी बहुत ही छोटी थी और इसके चारों तरफ दीवार बहुत साफ और संगीन थी। मनोरमा ने एक तरफ की दीवार पर हाथ रखके कोई खटका या किसी पत्थर को दबाया जिसका हाल नानक को कुछ भी

मालूम न हुआ मगर एक पत्थर की चट्टान भीतर की तरफ होकर बगल हो गई और अन्दर जाने के लिए रास्ता निकल आया। मनोरमा के पीछे-पीछे नानक उस कोठरी के अन्दर चला गया और इसके साथ ही वह पत्थर की सिल्ली बिना हाथ लगाये अपने ठिकाने चली गई तब दरवाजा बन्द हो गया। मनोरमा से नानक ने उस दरवाजे के खोलने और बन्द करने की तर्कीब पूछी और मनोरमा ने उसका भेद बता दिया बल्कि उस दरवाजे को एक दफे खोलके और बन्द करके भी दिखा दिया, इसके बाद दोनों आगे की तरफ बढ़े। इस समय जिस जगह ये दोनों थे वह एक लम्बा-चौड़ा कमरा था मगर उसमें किसी तरह जाने के लिए कोई दरवाजा दिखाई नहीं देता था, हां एक तरफ दीवार में एक बहुत बड़ी आलमारी जरूर बनी हुई थी और उसका पल्ला किसी खटके के दबाने से खुला करता था। मनोरमा ने उसके खोलने की तर्कीब भी नानक को बताई और नानक ही के हाथ से उसका पल्ला भी खुलवाया। पल्ला खुलने पर मालूम हुआ कि यह भी एक दरवाजा है और इसी जगह से सुरंग में घुसना होता हे। दोनों आदमी सुरंग के अन्दर रवाना हुए। यह सुरंग इस लायक थी कि तीन आदमी एक साथ मिलकर जा सकें।

लगभग पचास कदम जाने के बाद फिर एक कोठरी मिली जो पहली कोठरियों की बनिस्बत ज्यादे लम्बी-चौड़ी थी। इसमें चारों तरफ कई खुली आलमारियां थीं जो पचासों किस्म की चीजों से भरी हुई थीं। किसी में तरह-तरह के हर्बे थे, किसी में ऐयारी का सामान, किसी में रंगबिरंगी बनावटी मूंछ और नकाब इत्यादि थे और कई आलमारियां बोतलों और शीशियों से भरी हुई थीं। इन सामानों को देखकर नानक ने मनोरमा से कहा, "यह सब तो है मगर उस जवाहिरखाने का भी कहीं पता-निशान है जिसका होना तुमने बयान किया था!"

मनोरमा - मैंने आपसे झूठ नहीं कहा था, वह जवाहिरखाना भी इसी सुरंग में मौजूद है।

नानक - मगर कहां है?

मनोरमा - इस सुरंग में और थोड़ी दूर जाने के बाद इसी तरह का एक कमरा पुनः मिलेगा, उसी कमरे में आप उन सब चीजों को देखेंगे। इस सुरंग में जमानिया पहुंचने तक इस तरह के ग्यारह अड्डे या कमरे मिलेंगे जिनमें करोड़ों रुपये की सम्पत्ति देखने में आवेगी!

नानक - (लालच के साथ) जब कि तुम्हें यहां का रास्ता मालूम है और ऐसी-ऐसी नादिर चीजें तुम्हारी जानी हुई हैं तो इन सभों को उठाकर अपने घर में क्यों नहीं ले जातीं!!

मनोरमा - मायारानी की बदौलत मुझे किसी चीज की कमी नहीं है। रुपये, पैसे, गहने, जवाहिरात और दौलत से मेरी तबियत भरी हुई है, इन सब चीजों की मैं कोई हकीकत नहीं समझती।

नानक - बेशक ऐसा ही है!

मनोरमा - (बोतल व शीशियों से भरी हुई एक आलमारी की तरफ इशारा करके) देखो ये बोतलें ऐशोआराम की जान खुशबूदार चीजों से भरी हुई हैं।

इतना कहकर मनोरमा फुर्ती के साथ उस आलमारी के पास चली गई और एक बोतल उठाकर उसका मुंह खोलकर खूब सूंघकर बोली, "अहा, सिवाय मायारानी के और तिलिस्म के राजा के ऐसी खुशबूदार चीजें और किसे मिल सकती हैं?'

इतना कहकर वह बोतल उसी जगह मुंह बन्द करके रख दी और दूसरी बोतल उठाकर नानक के पास ले चली, मगर वह बोतल उसके हाथ से छूटकर जमीन पर गिर पड़ी या शायद उसने जान-बूझकर ही गिरा दी। बोतल गिरने के साथ ही टूट गई और उसमें का खुशबूदार तेल चारों तरफ जमीन पर फैल गया। मनोरमा बहुत रंज और अफसोस करने लगी और उसकी मुरौवत से नानक ने भी रंज दिखाया। उस बोलत में जो तेल था वह बहुत ही खुशबूदार और इतना तेज था कि गिरने के साथ ही उसकी खुशबू तमाम कमरे में फैल गई और नानक उस खुशबू की तारीफ करने लगा।

निःसन्देह मनोरमा ने नानक को पूरा उल्लू बनाया। पहिले जो बोतल खोलके मनोरमा ने सूंघी थी उसमें भी एक प्रकार की खुशबूदार चीज थी मगर उसमें यह असर था कि उसके सूंघने के बाद दो घण्टे तक किसी तरह की बेहोशी का असर सूंघने वाले पर नहीं हो सकता था, और जो दूसरी बोतल उसने हाथ से गिरा दी थी उसमें बहुत तेज बेहोशी का असर था जिसने नानक को तो चौपट ही कर दिया। वह उस खुशबू की तारीफ करता-करता ही जमीन पर लम्बा हो गया, मगर मनोरमा पर उस दवा का कुछ भी असर न हुआ क्योंकि वह पहिले ही से एक दूसरी दवा सूंघकर अपने दिमाग का बंदोबस्त कर चुकी थी। नानक के हाथ से मनोरमा ने मोमबत्ती ले ली और एक किनारे जमीन पर जमा दी।

जब नानक अच्छी तरह बेहोश हो गया तो मनोरमा ने उसके हाथ से अपनी अंगूठी उतार ली और फिर तिलिस्मी खंजर के जोड़ की अंगूठी उतार लेने के बाद तिलिस्मी खंजर भी अपने कब्जे में कर लिया और इसके बाद एक लम्बी सांस लेकर कहा, "अब कोई हर्ज की बात नहीं है!"

थोड़ी देर तक कुछ सोचने-विचारने के बाद मनोरमा ने एक हाथ में मोमबत्ती ली और दूसरे हाथ से नानक का पैर पकड़ घसीटते हुए बाहर वाली कोठरी में ले आई। उस कोठरी का जिसमें से निकली थी दरवाजा बन्द कर दिया और साथ ही इसके एक तर्कीब ऐसी और भी कर दी कि नानक पुनः उस दरवाजे को खोल न सके।

इन कामों से छुट्टी पाने के बाद मनोरमा ने नानक की मुश्कें बांधीं और हर तरह से बेकाबू करने के बाद लखलखा सुंघाकर होश में लाने का उद्योग करने लगी। थोड़ी ही देर बाद नानक होश में आ गया और अपने को हर तरह से मजबूर और सामने हाथ में उसी का जूता लिए मनोरमा को मौजूद पाया।

नानक - (आश्चर्य से) यह क्या! तुमने मुझे धोखा दिया!!

मनोरमा - (हंसकर) जी नहीं, यह तो दिल्लगी की जा रही है! क्या तुम नहीं जानते कि ब्याह-शादी में लोग दिल्लगी करते हैं मेरा कोई नातेदार तो है नहीं जो तुमसे दिल्लगी करके ब्याह की रस्म पूरी करे इसलिए मैं स्वयं ही इस रस्म को पूरा किया चाहती हूं!!

इतना कहकर मनोरमा तेजी के साथ ब्याह की रस्म पूरी करने लगी। जब नानक सिर की खुजलाहट से दुःखी हो गया तो हाथ जोड़कर बोला, "ईश्वर के लिए मुझ पर दया करो, मैं ऐसी शादी से बाज आया, मुझसे बड़ी भूल हुई।"

मनोरमा - (रुककर) नहीं, घबराने की कोई बात नहीं है। मैं तुम्हारे साथ किसी तरह की बुराई न करूंगी बल्कि भलाई करूंगी। मैं देखती हूं कि तुम्हारे हमजोली लोग सच्ची दिल्लगी से तुम्हें बड़ा दुख देते हैं और तुम्हारी स्त्री भी यद्यपि तुम्हारे ही नातेदारों और मित्रों को प्रसन्न करके गहने, कपड़े तथा सौगात से तुम्हारा घर भरती है मगर तुम्हारी नाक का कुछ भी मुलाहिजा नहीं करती। अतएव तुम्हारी नाक पर हरदम शामत आती ही रहती है, इसलिए मैं दया करके तुम्हारी नाक ही को जड़ से उड़ा देना ही पसन्द करती हूं जिससे आइन्दा के लिए तुम्हें कोई कुछ कह न सके। हां, इतना ही नहीं बल्कि तुम्हारे साथ मैं एक नेकी और भी किया चाहती हूं, जिसका ब्योरा अभी कह देना उचित नहीं समझती।

नानक - क्षमा करो, क्षमा करो, मैं हाथ जोड़कर कहता हूं कि मुझे माफ करो। मैं कसम खाकर कहता हूं कि आज से मैं अपने को तुम्हारा गुलाम समझूंगा और जो कुछ तुम कहोगी वही करूंगा।

मनोरमा - (हंसकर) अच्छा तो आज से तू मेरा गुलाम हुआ!

नानक - बेशक मैं आज से तुम्हारा गुलाम हुआ, असली क्षत्रिय होऊंगा तो तुम्हारे हुक्म से मुंह न मोड़ूंगा।

मनोरमा - (हंसती हुई) इसी में तो मुझको शक है कि तेरी जात क्या है। अस्तु कोई चिन्ता नहीं, मैं तुझे हुक्म देती हूं कि दो महीने तक अपने घर न जाइयो और इस बीच में अपने बाप या किसी दोस्त-नातेदार से भी न मिलियो, इसके बाद जो इच्छा हो कीजियो, मैं कुछ न बोलूंगी मगर मुझसे और मेरे पक्षपातियों से दुश्मनी का इरादा कभी न कीजियो।

नानक - ऐसा ही होगा।

मनोरमा - अगर मेरी आज्ञा के विरुद्ध कोई काम करेगा तो तुझे जान से मार डालूंगी, इसे खूब याद रक्खियो।

नानक - मैं खूब याद रक्खूंगा और तुम्हारी आज्ञा के विरुद्ध कोई काम न करूंगा, परन्तु कृपा करके मेरा खंजर तो मुझे दे दो!

मनोरमा - (क्रोध से) अब यह खंजर तुझे नहीं मिल सकता, खबरदार इसके मांगने या लेने की इच्छा न कीजियो। अच्छा तब मैं जाती हूं।

इतना कहकर मनोरमा ने तिलिस्मी खंजर नानक के बदन में लगा दिया और जब वह बेहोश हो गया तो उसके हाथ-पैर खोल दिये, जलती हुई मोमबत्ती एक कोने में खड़ी कर दी और वहां से रवाना होकर खंडहर के बाहर निकल आई। घोड़े को अभी तक खंडहर के पास चरते देखा, उसके पास चली गई, अयाल पर हाथ फेरा, दो-चार दफे थपथपाया और फिर सवार होकर पश्चिम की तरफ रवाना हो गई।

इधर नानक भी थोड़ी देर बाद होश में आया। मोमबत्ती एक किनारे जल रही थी, उसे उठा लिया और अपनी किस्मत को धिक्कार देता हुआ खंडहर के बाहर होकर डरता और कांपता हुआ एक तरफ को चला गया।

बयान **- 10**

कुंअर इन्द्रजीतसिंह, आनन्दसिंह और राजा गोपालसिंह बात कर ही रहे थे कि वही औरत चमेली की टट्टियों में फिर दिखाई दी और इन्द्रजीतसिंह ने चौंककर कहा, "देखिए वह फिर निकली!"

राजा गोपालसिंह ने बड़े गौर से उस तरफ देखा और यह कहते हुए उस तरफ रवाना हुए कि, "आप दोनों भाई इसी जगह बैठे रहिये, मैं इसकी खबर लेने जाता हूं।"

जब तक राजा गोपालसिंह चमेली की टट्टी के पास पहुंचे तब तक वह औरत पुनः अन्तर्ध्यान हो गई। गोपालसिंह थोड़ी देर तक उन्हीं पेड़ों में घूमते-फिरते रहे इसके बाद इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह के पास लौट आए।

इन्द्रजीत - कहिए क्या हुआ?

गोपाल - हमारे पहुंचने के पहिले ही वह गायब हो गई, गायब क्या हो गई बस उसी दर्जे में चली गई जिसमें देवमन्दिर है। मेरा इरादा तो हुआ कि उसका पीछा करूं मगर यह सोचकर लौट आया कि उसका पीछ करके उसे गिरफ्तार करना घण्टे - दो घण्टे का काम नहीं है बल्कि दो-चार पहर या दो-एक दिन का काम है, क्योंकि देवमन्दिर वाले दर्जे का बहुत बड़ा विस्तार है तथा छिप रहने योग्य स्थानों की भी वहां कमी नहीं है और मुझे इस समय इतनी फुरसत नहीं। इसका खुलासा हाल तो इस समय आप लोगों से न कहूंगा, हां इतना जरूर कहूंगा कि जिस समय मैं अपनी तिलिस्मी किताब लेने गया था और उसके न मिलने से दुःखी होकर लौटा चाहता था उसी समय एक और दुःखदाई खबर सुनने में आई जिसके सबब से मुझे कुछ दिन के लिए जमानिया तथा आप दोनों भाइयों का साथ छोड़ना आवश्यक हो गया है और दो घण्टे के लिए भी यहां रहना मैं पसन्द नहीं करता, फिर भी कोई चिन्ता की बात नहीं है, आप लोग शौक से इस तिलिस्म के जिस हिस्से को तोड़ सकें तोड़ें मगर इस औरत का जो अभी दिखाई दी थी बहुत ध्यान रक्खें। मेरा दिल यही कहता है कि मेरी तिलिस्मी किताब इस औरत ने चुराई है क्योंकि यदि ऐसा न होता तो वह यहां तक कदापि न पहुंच सकती।

इन्द्र - यदि ऐसा हो तो कह सकते हैं कि वह हम लोगों के साथ भी दगा किया चाहती है।

गोपाल - निःसन्देह ऐसा ही है, परन्तु यदि आप लोग उसकी तरफ से बेफिक्र न रहेंगे तो वह आप लोगों का कुछ भी न बिगाड़ सकेगी, साथ ही इसके यदि आप उद्योग में लगे रहेंगे तो वह किताब भी जो उसने चुराई है, हाथ लग जायेगी।

इन्द्र - जो कुछ आपने आज्ञा दी है मैं उस पर विशेष ध्यान रक्खूंगा मगर मालूम होता है कि आपने कोई बहुत दुःखदाई खबर सुनी है क्योंकि यदि ऐसा न होता तो इस अवस्था में और तिलिस्मी किताब खो जाने की तरफ ध्यान न देकर आप यहां से जाने का इराद न करते!

आनन्द - और अब आप कह ही चुके हैं कि उसका खुलासा हाल न कहेंगे तो हम लोग पूछ भी नहीं सकते!

गोपाल - निःसन्देह ऐसा ही है, मगर कोई चिन्ता नहीं आप लोग बुद्धिमान हैं और जैसा उचित समझें करें, हां एक बात मुझे और भी कहनी है!

इन्द्र - वह क्या?

गोपाल **-** (एक लपेटा हुआ कागज लालटेन के सामने रखकर) जब मैं उस औरत के पीछे चमेली की टट्टियों में गया तो वह औरत तो गायब हो गई मगर उसी जगह यह लपेटा हुआ कागज ठीक दरवाजे के ऊपर ही पड़ा हुआ मुझे मिला, पढ़ो तो सही इसमें क्या लिखा है।

इन्द्रजीतसिंह ने उस कागज को खोलकर पढ़ा, यह लिखा हुआ था -

"यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि न तो आप लोग मुझे जानते हैं और न मैं आप लोगों को जानती हूं, इसके अतिरिक्त जब तक मुझे इस बात का निश्चय न हो जाय कि आप लोग मेरे साथ किसी तरह की बुराई न करेंगे तब तक मैं आप लोगों को अपना परिचय भी नहीं दे सकती। हां इतना अवश्य कह सकती हूं कि मैं बहुत दिनों से कैदियों की तरह इस तिलिस्म में पड़ी हूं। यदि आप लोग दयावान् और सज्जन हैं तो मुझे इस कैद से अवश्य छुड़ावेंगे।

कोई दुःखिनी।"

गोपाल **-** (आश्चर्य से) यह तो एक दूसरी ही बात निकली!

इन्द्र - ठीक है मगर इसके लिखने पर हम लोग विश्वास ही क्यों कर सकते हैं?

गोपाल - आप सच कहते हैं, हम लोगों को इसके लिखने पर यकायक विश्वास न करना चाहिए। खैर मैं जाता हूं आप जो उचित समझेंगे करेंगे। आइए इस समय हम लोग एक साथ बैठके भोजन तो कर लें, फिर क्या जाने कब और क्योंकर मुलाकात हो।

इतना कहकर गोपालसिंह ने वह चंगेर जो अपने साथ लाए थे और जिसमें खाने की अच्छी-अच्छी चीजें थीं, आगे रक्खीं और तीनों भाई एक साथ भोजन और बीच-बीच में बातचीत भी करने लगे। जब खाने से छुट्टी मिली तो तीनों भाइयों ने नहर में से जल पीया और मुंह धोकर निश्चिन्त हुए। इसके बाद कुंअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह को बहुत कुछ समझा-बुझा और वहां से देवमन्दिर में जाने का रास्ता बताकर राजा गोपालसिंह वहां से रवाना हो गए।

बयान **- 11**

राजा गोपालसिंह के चले जाने के बाद दोनों कुमारों ने बातचीत करते-करते ही रात बिता दी और सुबह को दोनों भाई जरूरी कामों से छुट्टी पाकर फिर उसी बाजे वाले कमरे की तरफ रवाना हुए। जिस राह से इस बाग में आये थे वह दरवाजा अभी तक खुला हुआ था, उसी राह से होते हुए दोनों तिलिस्मी बाजे के पास पहुंचे। इस समय आनन्दसिंह अपने तिलिस्मी खंजर से रोशनी कर रहे थे।

दोनों भाइयों की राय हुई कि इस बाजे में जो कुछ बातें भरी हुई हैं उन्हें एक दफे अच्छी तरह सुनकर याद कर लेना चाहिए, फिर जैसा होगा देखा जायगा। आखिर ऐसा ही किया। बाजे की ताली उनके हाथ लग ही चुकी थी और ताली लगाने की तर्कीब उस तख्ती पर लिखी हुई थी जो ताली के साथ मिली थी। अस्तु इन्द्रजीतसिंह ने बाजे में ताली लगाई और दोनों भाई उसकी आवाज गौर से सुनने लगे। जब बाजे का बोलना बन्द हुआ तो इन्द्रजीतसिंह ने आनन्दसिंह से कहा, "मैं बाजे में ताली लगाता हूं और तिलिस्मी खंजर से रोशनी भी करता हूं और तुम इस बाजे में से जो कुछ आवाज निकले संक्षेप रीति से लिखते चले जाओ।" आनन्दसिंह ने इसे कबूल किया और उसी किताब में जिसमें पहिले इन्द्रजीतसिंह इस बाजे की कुछ आवाज लिख चुके थे लिखने लगे। पहिले वह आवाज लिख गये जो अभी बाजे में से निकली थी इसके बाद इन्द्रजीतसिंह ने इस बाजे का एक खटका दबाया और फिर ताली देकर आवाज सुनने तथा आनन्दसिंह लिखने लगे।

इस बाजे में जितनी आवाजें भरी हुई थीं उनका सुनना और लिखना दो-चार घण्टे का काम न था बल्कि कई दिनों का काम था क्योंकि बाजा बहुत धीरे-धीरे चलकर आवाज देता था और जो बात कुमार के समझ में न आती थी उसे दोहराकर सुनना पड़ता था। अस्तु आज चार घण्टे तक दोनों कुमार उस बाजे की आवाज सुनने और लिखने में लगे रहे, इसके बाद फिर उसी बाग में चले आये जिसका जिक्र ऊपर आ चुका है। बाकी का दिन और रात उसी बाग में बिताया और दूसरे दिन सवेरे जरूरी कामों से छुट्टी पाकर फिर तहखाने में घुसे तथा बाजे वाले कमरे में आकर फिर बाजे की आवाज सुनने और लिखने के काम में लगे। इसी तरह दोनों कुमारों को बाजे की आवाज सुनने और लिखने के काम में कई दिन लग गए और इस बीच में दोनों कुमारों ने तीन दफे उस औरत को देखा जिसका हाल पहिले लिखा जा चुका है और जिसकी लिखी एक चीठी राजा गोपालसिंह के हाथ लगी थी। उस औरत के विषय में जो बातें लिखने योग्य हुईं उन्हें हम यहां पर लिखते हैं।

राजा गोपालसिंह के जाने के बाद पहिली दफे जब वह औरत दिखाई दी उस समय दोनों भाई नहर के किनारे बैठे बातचीत कर रहे थे। समय संध्या का था और बाग की हर एक चीज साफ-साफ दिखाई दे रही थी। यकायक वह औरत उसी चमेली की झाड़ी में से निकलती दिखाई दी। वह दोनों कुमारों की तरफ तो नहीं आई मगर उन्हें दिखाकर एक कपड़े का टुकड़ा जमीन पर रखने के बाद पुनः चमेली की झाड़ी में घुसकर गायब हो गई।

इन्द्रजीतसिंह की आज्ञा पाकर आनन्दसिंह वहां गये और उस टुकड़े को उठा लाए, उस पर किसी तरह के रंग से यह लिखा हुआ था -

"सत्पुरुषों के आगमन से दीन-दुखिया प्रसन्न होते हैं और सोचते हैं कि अब हमारा भी कुछ न कुछ भला होगा! मुझ दुखिया को भी इस तिलिस्म में सत्पुरुषों की बाट जोहते और ईश्वर से प्रार्थना करते बहुत दिन बीत गये, परन्तु अब आप लोगों के आने से भलाई की आशा जान पड़ने लगी है। यद्यपि मेरा दिल गवाही देता है कि आप लोगों के हाथ से सिवाय भलाई के मेरी बुराई नहीं हो सकती तथापि इस कारण से कि बिना समझे दोस्त-दुश्मन का निश्चय कर लेना नीति के विरुद्ध है, मैं आपकी सेवा में उपस्थित न हुई। अब आशा है कि आप अनुग्रहपूर्वक अपना परिचय देकर मेरा भ्रम दूर करेंगे।

इन्दिरा।"

इस पत्र के पढ़ने से दोनों कुमारों को बड़ा ताज्जुब हुआ और इन्द्रजीतसिंह की आज्ञानुसार आनन्दसिंह ने उसके पत्र का यह उत्तर लिखा -

"हम लोगों की तरफ से किसी तरह का खुटका न रक्खो। हम लोग राजा वीरेन्द्रसिंह के लड़के हैं और इस तिलिस्म को तोड़ने के लिए यहां आये हैं। तुम बेखटके अपना हाल हमसे कहो, हम लोग निःसन्देह तुम्हारा दुःख दूर करेंगे।"

यह चीठी चमेली की झाड़ी में उसी जगह हिफाजत के साथ रख दी गई जहां से उस औरत की चीठी मिली थी। दो दिन तक वह औरत दिखाई न दी मगर तीसरे दिन जब दोनों कुमार बाजे वाले तहखाने में से लौटे और उस चमेली की टट्टी के पास गए तो ढूंढ़ने पर आनन्दसिंह को अपनी लिखी हुई चीठी का जवाब मिला। यह जवाब भी एक छोटे से कपड़े के टुकड़े पर लिखा हुआ था जिसे आनन्दसिंह ने पढ़ा, मतलब यह था -

"यह जानकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई कि आप राजा वीरेन्द्रसिंह के लड़के हैं जिन्हें मैं बहुत अच्छी तरह से जानती हूं, इसलिए आपकी सेवा में बेखटके उपस्थित हो सकती हूं, मगर राजा गोपालसिंह से डरती हूं जो आपके पास आया करते हैं।

इन्दिरा।"

पुनः कुंअर इन्द्रजीतसिंह की तरफ से यह जवाब लिखा गया -

"हम प्रतिज्ञा करते हैं कि राजा गोपालसिंह भी तुम्हें किसी प्रकार का कष्ट न देंगे।"

यह चीठी भी उसी तरह ठिकाने पर रख दी गई और फिर दो रोज तक इन्दिरा का कुछ हाल मालूम न हुआ। तीसरे दिन संध्या होने के पहिले जब कुछ-कुछ दिन बाकी था और दोनों कुमार उसी बाग में नहर के किनारे बैठे बातचीत कर रहे थे यकायक उसी चमेली की झाड़ी में से हाथ में लालटेन लिए निकलती हुई इन्दिरा दिखाई पड़ी। वह सीधे उस तरफ रवाना हुई जहां दोनों कुमार नहर के किनारे बैठे हुए थे। जब उनके पास पहुंची लालटेन जमीन पर रखकर प्रणाम किया और हाथ जोड़कर सामने खड़ी हो गई। इसकी सूरत-शक्ल के बारे में हमें जो लिखना था ऊपर लिख चुके हैं। यहां पुनः लिखने की आवश्यकता नहीं है, हां इतना जरूर कहेंगे कि इस समय इसकी पोशाक में फर्क था। इन्द्रजीतसिंह ने बड़े गौर से देखा और कहा, "बैठ जाओ और निडर होकर अपना हाल कहो।"

इन्दिरा - (बैठकर) इसीलिए तो मैं सेवा में उपस्थित हुई हूं कि अपना आश्चर्यजनक हाल आपसे कहूं। आप प्रतापी राजा वीरेन्द्रसिंह के लड़के हैं और इस योग्य हैं कि हमारा मुकद्दमा सुनें, इन्साफ करें, दुष्टों को दण्ड दें और हम लोगों को दुःख के समुन्द्र से निकालकर बाहर करें।

इन्द्र - (आश्चर्य से) हम लोगों! क्या तुम अकेली नहीं हो! क्या तुम्हारे साथ कोई और भी इस तिलिस्म में दुःख भोग रहा है?

इन्दिरा - जी हां, मेरी मां भी इस तिलिस्म के अन्दर बुरी अवस्था में पड़ी है। मैं तो चलने-फिरने योग्य भी हूं परन्तु वह बेचारी तो हर तरह से लाचार है। आप मेरा किस्सा सुनेंगे तो आश्चर्य करेंगे और निःसन्देह आपको हम लोगों पर दया आयेगी।

इन्द्र - हां-हां, हम सुनने के लिए तैयार हैं, कहो और शीघ्र कहो।

इन्दिरा अपना किस्सा शुरू किया ही चाहती थी कि उसकी निगाह यकायक राजा गोपालसिंह पर जा पड़ी जो उसके सामने और दोनों कुमारों के पीछे की तरफ से हाथ में लालटेन लिये हुए आ रहे थे। वह चौंककर उठ खड़ी हुई और उसी समय कुंअर इन्द्रजीतसिंह तथा आनन्दसिंह ने भी घूमकर राजा गोपालसिंह को देखा। जब राजा साहब दोनों कुमारों के पास पहुंचे तो इन्दिरा ने प्रणाम किया और हाथ जोड़कर खड़ी हो गई। कुंअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह भी बड़े भाई का लिहाज करके खड़े हो गये। इस समय राजा गोपालसिंह का चेहरा खुशी से दमक रहा था और वे हर तरह से प्रसन्न मालूम होते थे।

इन्द्र **-** **(**गोपालसिंह से**)** आपने तो कई दिन लगा दिए।

गोपाल - हां एक ऐसा ही मामला आ पड़ा था कि जिसका पूरा पता लगाये बिना यहां आ न सका। पर आज मैं अपने पेट में ऐसी - ऐसी खबरें भरके लाया हूं कि जिन्हें सुनकर आप लोग बहुत ही प्रसन्न होंगे और साथ ही इसके आश्चर्य भी करेंगे। मैं सब हाल आपसे कहूंगा मगर **(**इन्दिरा की तरफ इशारा करके**)** इस लड़की का हाल सुन लेने के बाद। **(**अच्छी तरह देखकर**)** निःसन्देह इसकी सूरत उस पुतली की ही तरह है।

आनन्द - कहिए भाईजी, अब तो मैं सच्चा ठहरा न!

गोपाल - बेशक, तो क्या इसने अपना हाल आप लोगों से कहा

इन्द्र - जी यह अपना हाल कहा ही चाहती थी कि आप लोग दिखाई पड़ गये। यह यकायक हम लोगों के पास नहीं आई बल्कि पत्र द्वारा इसने पहिले मुझसे प्रतिज्ञा करा ली कि हम लोग इसका दुःख दूर करेंगे और आप (राजा गोपालसिंह) भी इस पर खफा न होंगे।

गोपाल - (ताज्जुब से) मैं इस पर क्यों खफा होने लगा! (इन्दिरा से) क्यों जी, तुम्हें मुझसे डर क्यों पैदा हुआ?

इन्दिरा - इसलिए कि मेरा किस्सा आपके किस्से से बहुत सम्बन्ध रखता है, और हां इतना भी मैं इसी समय कह देना उचित समझती हूं कि मेरा चेहरा जिसे आप लोग देख रहे हैं असली नहीं बल्कि बनावटी है, यदि आज्ञा हो तो इसी नहर के जल से मैं मुंह धो लूं, तब आश्चर्य नहीं कि आप मुझे पहिचान लें।

गोपाल - (ताज्जुब से) क्या मैं तुम्हें पहिचान लूंगा?

इन्दिरा - यदि ऐसा हो तो आश्चर्य नहीं।

गोपाल - अच्छा अपना मुंह धो डालो।

इतना कहकर राजा गोपालसिंह लालटेन जमीन पर रखकर बैठ गए और कुंअर इन्द्रजीतसिंह तथा आनन्दसिंह को भी बैठने के लिए कहा। जब इन्दिरा अपना चेहरा साफ करने के लिए नहर के किनारे चलकर कुछ आगे बढ़ गई तब इन तीनों में यों बातचीत होने लगी -

इन्द्र - हां यह तो कहिए आप क्या खबर लाए हैं?

गोपाल - वह किस्सा बहुत बड़ा है, पहिले इस लड़की का हाल सुन लें तब कहें, हां इसने अपना नाम क्या बताया था?

इन्द्र - इन्दिरा।

गोपाल - (चौंककर) इन्दिरा!

इन्द्र - जी हां।

गोपाल - (सोचते हुए, धीरे से) कौन-सी इन्दिरा वह इन्दिरा तो नहीं मालूम पड़ती, कोई दूसरी होगी, मगर शायद वही हो, हां वह तो कह चुकी है कि मेरी सूरत बनावटी

है, आश्चर्य नहीं कि चेहरा साफ करने पर वही निकले, अगर वही हो तो बहुत अच्छा है।

इन्द्र - खैर वह आती ही है, सब हाल मालूम हो जायेगा तब तक अपनी अनूठी खबरों में से दो - एक सुनाइये।

गोपाल - यहां से जाने के बाद मुझे रोहतासगढ़ का पूरा-पूरा हाल मालूम हुआ है क्योंकि आजकल राजा वीरेन्द्रसिंह, तेजसिंह, देवीसिंह, भैरोसिंह, तारासिंह, किशोरी, कामिनी, कमलिनी, लाडिली और मेरी स्त्री लक्ष्मीदेवी इत्यादि सब कोई वहां ही जुटे हुए हैं और एक अजीबोगरीब मुकद्दमा पेश है।

इन्द्र **-** (चौंककर) लक्ष्मीदेवी! क्या इनका पता लग गया?

गोपाल - हां, लक्ष्मीदेवी वही तारा निकली जो कमलिनी के यहां उसकी सखी बनके रहती थी और जिसे आप जानते हैं।

इन्द्र **-** (आश्चर्य से) वही लक्ष्मीदेवी थीं!

गोपाल - हां वह लक्ष्मीदेवी ही थी जो बहुत दिनों से अपने को छिपाये हुए दुश्मनों से बदला लेने का मौका ढूंढ़ रही थी और समय पाकर अनूठे ढंग से यकायक प्रकट हो गई। उसका किस्सा भी बड़ा ही अनूठा है।

आनन्द - तो क्या आप रोहतासगढ़ गये थे?

गोपाल - नहीं।

इन्द्र - सो क्यों, इतना सब हाल सुनने पर भी आप लक्ष्मीदेवी को देखने के लिए वहां क्यों नहीं गये?

गोपाल - वहां न जाने का सबब भी बतावेंगे।

इन्द्र - खैर यह बताइये कि लक्ष्मीदेवी यकायक किस अनूठे ढंग से प्रकट हो गईं और रोहतासगढ़ में कौन-सा अजीबोगरीब मुकद्दमा पेश है?

गोपाल - मैं सब हाल आपसे कहूंगा, देखिए वह इन्दिरा आ रही है, पर कोई चिन्ता नहीं अगर यह वही इन्दिरा है जो मैं सोचे हुआ हूं तो उसके सामने भी सब हाल बेखटके कह दूंगा।

इतने ही में अपना चेहरा साफ करके इन्दिरा भी वहां आ पहुंची, चेहरा धोने और साफ करने से उसकी खूबसूरती में किसी तरह की कमी नहीं आई थी बल्कि वह पहिले से ज्यादे खूबसूरत मालूम पड़ती थी, हां अगर कुछ फरक पड़ा था तो केवल इतना ही कि बनिस्बत पहिले के अब वह कम उम्र की मालूम होती थी।

इन्दिरा के पास आते ही और उसकी सूरत देखते ही गोपालसिंह झट से उठ खड़े हुए और उसका हाथ पकड़कर बोले, "हैं, इन्दिरा! बेशक तू वही इन्दिरा है जिसके होने की मैं आशा करता था। यद्यपि कई वर्षों के बाद आज किस्मत ने तेरी सूरत दिखाई है और जब मैंने आखिरी मर्तबे तेरी सूरत देखी थी तब तू निरी लड़की थी मगर फिर भी आज मैं तुझे पहिचाने बिना नहीं रह सकता। तू मुझसे डर मत और अपने दिल में किसी तरह का खुटका भी मत ला। मुझे खूब मालूम हो गया है कि मेरे मामले में तू बिल्कुल बेकसूर है। मैं तुझे धर्म की लड़की समझता हूं और समझूंगा, मेरे सामने बैठ जा और अपना अनूठा किस्सा कह। हां पहिले यह तो बता कि तेरी मां कहां है कैद से छूटने पर मैंने उसकी बहुत खोज की मगर कुछ भी पता न लगा। निःसन्देह तेरा किस्सा बड़ा ही अनूठा होगा।

इन्दिरा **-** (बैठने के बाद आंसू से भरी हुई आंखों को आंचल से पोंछती हुई) मेरी मां बेचारी भी इसी तिलिस्म में कैद है!

गोपाल **-** (ताज्जुब से) इसी तिलिस्म में कैद है।

इन्दिरा - जी हां, इसी तिलिस्म में कैद है, बड़ी कठिनाइयों से उसका पता लगाती हुई मैं यहां तक पहुंची। अगर मैं यहां तक पहुंचकर उससे न मिलती तो निःसन्देह वह अब तक मर गई होती। मगर न तो मैं उसे कैद से छुड़ा सकती हूं और न स्वयं इस तिलिस्म के बाहर ही निकल सकती हूं। दस-पन्द्रह दिन के लगभग हुए होंगे कि अकस्मात् एक किताब मेरे हाथ लग गई जिसके पढ़ने से इस तिलिस्म का कुछ हाल मुझे मालूम हो गया है और मैं यहां घूमने-फिरने लायक भी हो गई हूं, मगर इस तिलिस्म के बाहर नहीं निकल सकती। क्या कहूं उस किताब का मतलब पूरा-पूरा समझ में नहीं आता, यदि मैं उसे अच्छी तरह समझ सकती तो निःसन्देह यहां से बाहर जा सकती और आश्चर्य नहीं कि अपनी मां को भी छुड़ा लेती।

गोपाल - वह किताब कौन-सी है और कहां है

इन्दिरा **-** (कपड़े के अन्दर से एक छोटी-सी किताब निकालकर और गोपालसिंह के हाथ में देकर) लीजिए यही है।

यह किताब लम्बाई-चौड़ाई में बहुत छोटी थी और उसके अक्षर भी बड़े ही महीन थे मगर इसे देखते ही गोपालसिंह का चेहरा खुशी से दमक उठा और उन्होंने इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह की तरफ देखकर कहा, "यही मेरी वह किताब है जो खो गई थी। (किताब चूमकर) आह, इसके खो जाने से तो मैं अधमुआ-सा हो गया था! (इन्दिरा से) यह तेरे हाथ कैसे लग गई!"

इन्दिरा - इसका हाल भी बड़ा विचित्र है, अपना किस्सा जब मैं कहूंगी तो उसी के बीच में वह भी आ जायगा।

इन्द्र - (गोपालसिंह से) मालूम होता है कि इन्दिरा का किस्सा बहुत बड़ा है, इसलिए आप पहिले रोहतासगढ़ का हाल सुना दीजिये तो एक तरफ से दिलजमई हो जाय।

कमलिनी के मकान की तबाही, किशोरी, कामिनी और तारा की तकलीफ, नकली बलभद्रसिंह के कारण भूतनाथ की परेशानी, लक्ष्मीदेवी, दारोगा और शेरअलीखां का रोहतासगढ़ में गिरफ्तार होना, राजा वीरेन्द्रसिंह का वहां पहुंचना, भूतनाथ के मुकद्दमे की पेशी, कृष्णा जिन्न का पहुंचकर इन्दिरा वाले कलमदान को पेश करना और असली बलभद्रसिंह का पता लगाने के लिए भूतनाथ को छुट्टी दिला देना इत्यादि जो कुछ बातें हम ऊपर लिख आए हैं वह सब हाल राजा गोपालसिंह ने इन्दिरा के सामने ही दोनों कुमारों से बयान किया और सभी ने बड़े गौर से सुना।

इन्दिरा - बड़े आश्चर्य की बात है कि वह कलमदान जिस पर मेरा नाम लिखा हुआ था कृष्णा जिन्न के हाथ क्योंकर लगा! हां, उस कलमदान का हमारे कब्जे से निकल जाना बहुत ही बुरा हुआ। यदि वह आज मेरे पास होता तो मैं बात की बात में भूतनाथ के मुकद्दमे का फैसला कर देती मगर अब क्या हो सकता है!

गोपाल - इस समय वह कलमदान राजा वीरेन्द्रसिंह के कब्जे में है इसलिए उसका तुम्हारे हाथ लगना कोई बड़ी बात नहीं है।

इन्दिरा - ठीक है मगर उन चीजों का मिलना तो अब कठिन हो गया जो उसके अन्दर थीं और उन्हीं चीजों का मिलना सबसे ज्यादा जरूरी था।

गोपाल - ताज्जुब नहीं कि वे चीजें भी कृष्णा जिन्न के पास हों और वह महाराज के कहने से तुम्हें दे दें।

इन्द्र - या उन चीजों से स्वयम् कृष्णा जिन्न वह काम निकाले जो तुम कर सकती हो!

इन्दिरा - नहीं, उन चीजों का मतलब जितना मैं बता सकती हूं उतना कोई दूसरा नहीं बता सकता!

गोपाल - खैर जो कुछ होगा देखा जायेगा।

आनन्द - (गोपालसिंह से) यह सब हाल आपको कैसे मालूम हुआ क्या आपने कोई आदमी रोहतासगढ़ भेजा था या खुद पिताजी ने यह सब हाल कहला भेजा है?

गोपाल - भूतनाथ स्वयम् मेरे पास मदद लेने के लिए आया था मगर मैंने मदद देने से इनकार किया।

इन्द्र - (ताज्जुब से) ऐसा क्यों किया?

गोपाल - (ऊंची सांस लेकर) विधाता के हाथों से मैं बहुत सताया गया हूं। सच तो यों है कि अभी तक मेरे होशहवास ठिकाने नहीं हुए, इसलिए मैं कुछ मदद करने लायक नहीं हूं, इसके अतिरिक्त मैं खुद अपनी तिलिस्मी किताब खो जाने के गम में पड़ा हुआ था, मुझे किसी की बात कब अच्छी लगती थी।

इन्द्र - (मुस्कुराकर) जी नहीं, ऐसा करने का सबब कुछ दूसरा ही है, मैं कुछ-कुछ समझ गया, खैर देखा जायगा, अब इन्दिरा का किस्सा सुनना चाहिए।

गोपाल - (इन्दिरा से) अब तुम अपना हाल कहो, यद्यपि तुम्हारा और तुम्हारी मां का हाल मैं बहुत कुछ जानता हूं मगर इन दोनों भाइयों को उसकी कुछ भी खबर नहीं है, बल्कि तुम दोनों का कभी नाम भी शायद इन्होंने न सुना होगा।

इन्द्र - बेशक ऐसा ही है।

गोपाल - इसलिए तुम्हें चाहिए कि अपना और अपनी मां का हाल शुरू से कह सुनाओ, मैं समझता हूं कि तुम्हें अपनी मां का कुछ हाल मालूम होगा?

इन्दिरा - जी हां मैं अपनी मां का हाल खुद उसकी जुबानी और कुछ इधर-उधर से भी पूरी तरह सुन चुकी हूं।

गोपाल - अच्छा तो अब कहना आरम्भ करो।

इस समय रात घण्टे भर से कुछ ज्यादा जा चुकी थी। इन्दिरा ने पहिले अपनी मां का और फिर अपना हाल इस तरह बयान किया -

इन्दिरा - मेरी मां का नाम सर्यू और पिता का नाम इन्द्रदेव है।

इन्द्र - (ताज्जुब से) कौन इन्द्रदेव?

गोपाल - वही इन्द्रदेव जो दारोगा का गुरुभाई है, जिसने लक्ष्मीदेवी की जान बचाई थी, और जिसका जिक्र मैं अभी कर चुका हूं।

इन्द्र - अच्छा तब।

इन्दिरा - मेरे नाना बहुत अमीर आदमी थे। लाखों रुपये की मौरूसी जायदाद उनके हाथ लगी थी और वह खुद भी बहुत पैदा करते थे, सिवाय मेरी मां के उनको और कोई औलाद न थी, इसीलिए वह मेरी मां को बहुत प्यार करते थे और धन-दौलत भी बहुत ज्यादे दिया करते थे। इसी कारण मेरी मां का रहना बनिस्बत ससुराल के नैहर में ज्यादे होता था। जिस जमाने का मैं जिक्र करती हूं उस जमाने में मेरी उम्र लगभग सात-आठ वर्ष के होगी मगर मैं बातचीत और समझ-बूझ में होशियार थी और उस समय की बात आज भी मुझे इस तरह याद है जैसे कल ही की बातें हों।

जाड़े का मौसम था जब से मेरा किस्सा शुरू होता है। मैं अपने ननिहाल में थी। आधी रात का समय था, मैं अपनी मां के पास पलंग पर सोई हुई थी। यकायक दरवाजा खुलने की आवाज आई और किसी आदमी को कमरे में आते देख मेरी मां उठ बैठी, साथ ही इसके मेरी नींद भी टूट गई। कमरे के अन्दर इस तरह यकायक आने वाले मेरे नाना थे जिन्हें देख मेरी मां को बड़ा ही ताज्जुब हुआ और वह पलंग के नीचे उतरकर खड़ी हो गई।

आनन्द - तुम्हारे नाना का क्या नाम था?

इन्दिरा - मेरे नाना का नाम दामोदरसिंह था और वे इसी शहर जमानिया में रहा करते थे।

आनन्द - अच्छा तब क्या हुआ?

इन्दिरा - मेरी मां को घबड़ाई हुई देखकर नाना साहब ने कहा, "सर्यू इस समय यकायक मेरे आने से तुझे ताज्जुब होगा और निःसन्देह यह ताज्जुब की बात है भी,

मगर क्या करूं किस्मत और लाचारी मुझसे ऐसा कराती है। सर्यू, इस बात को मैं खूब जानता हूं कि लड़की को अपनी मर्जी से ससुराल की तरफ बिदा कर देना सभ्यता के विरुद्ध और लज्जा की बात ही है मगर क्या करूं आज ईश्वर ही ने ऐसा करने के लिए मजबूर किया है। बेटी, आज मैं जबर्दस्ती अपने हाथ से अपने कलेजे को निकालकर बाहर फेंकता हूं अर्थात् अपनी एकमात्र औलाद को (तुझको) जिसे देखे बिना कल नहीं पड़ती थी जबर्दस्ती उसके ससुराल की तरफ बिदा करता हूं। मैंने सभों की चोरी बालाजी को बुलावा भेजा है और मुझे खबर लगी है कि दो-घंटे के अन्दर ही वह आया चाहते हैं। इस समय तुझे यह इत्तिला देने आया हूं कि इसी घंटे-दो घंटे के अन्दर तू भी अपने जाने की तैयारी कर ले!" इतना कहते-कहते नाना साहब का जी उमड़ आया, गला भर गया, और उनकी आंखों से टपाटप आंसू की बूंदें गिरने लगीं।

इन्द्र - बालाजी किसका नाम है?

इन्दिरा - मेरे पिता को मेरे ननिहाल में सब कोई बालाजी कहकर पुकारा करते थे।

इन्द्र - अच्छा फिर?

इन्दिरा - उस समय अपने पिता की ऐसी अवस्था देखकर मेरी मां बदहवास हो गई और उखड़ी हुई आवाज में बोली, "पिताजी, यह क्या आपकी ऐसी अवस्था क्यों हो रही है मैं यह बात क्यों देख रही हूं जो बात मैंने आज तक नहीं सुनी थी वह क्यों सुन रही हूं। मैंने ऐसा क्या कसूर किया है जो आज इस घर से निकाली जाती हूं?'

दामोदरसिंह ने कहा, "बेटी, तूने कुछ कसूर नहीं किया, सब कसूर मेरा है। जो कुछ मैंने किया है उसी का फल भोग रहा हूं बस इससे ज्यादे और मैं कुछ नहीं कहा चाहता, हां तुझसे मैं एक बात की अभिलाषा रखता हूं, आशा है कि तू अपने बाप की बात कभी न टालेगी। तू खूब जानती है कि इस दुनिया में तुझसे बढ़कर मैं किसी को नहीं मानता हूं और न तुमसे बढ़कर किसी पर मेरा स्नेह है, अतएव इसके बदले में केवल इतना ही चाहता हूं कि इस अन्तिम समय में जो कुछ मैं तुझे कहता हूं उसे तू अवश्य पूरा करे और मेरी याद अपने दिल में बनाये रहे...?"

इतना कहते-कहते मेरे नाना की बुरी हालत हो गई। आंसुओं ने उनके रोआबदार चेहरे को तर कर दिया और गला ऐसा भर गया कि कुछ कहना कठिन हो गया। मेरी मां भी अपने पिता की विचित्र बातें सुनकर अधमुई-सी हो गई। पिता स्नेह ने उसका कलेजा हिला दिया, न रुकने वाले आंसुओं को पोंछकर और मुश्किल से अपने दिल

को सम्हालकर वह बोली, "पिताजी, कहो, शीघ्र कहो कि आप मुझसे क्या चाहते हैं मैं आपके चरणों पर जान देने के लिए तैयार हूं।"

इसके जवाब में दामोदरसिंह ने यह कहकर कि "मैं भी तुमसे यही आशा रखता हूं' अपने कपड़ों के अन्दर से एक कलमदान निकाला और मेरी मां को देकर कहा, "इसे अपने पास हिफाजत से रखियो और जब तक मैं इस दुनिया में कायम रहूं इसे कभी मत खोलियो। देख, इस कलमदान के ऊपर तीन तस्वीरें बनी हुई हैं। बिचली तस्वीर के नीचे इन्दिरा का नाम लिखा हुआ है। जब तेरा पति इस कलमदान के अन्दर का हाल पूछे तो कह दीजियो कि मेरे पिता ने यह कलमदान इन्दिरा को दिया है और इस पर उसका नाम भी लिख दिया है तथा ताकीद कर दी है कि जब तक इन्दिरा की शादी न हो जाय यह कलमदान खोला न जाय अस्तु। जिस तरह हो यह कलमदान खुलने न पावे। यह तकलीफ तुझे ज्यादे दिन तक भोगनी न पड़ेगी क्योंकि मेरी जिन्दगी का अब कोई ठिकाना नहीं रहा। मैं इस समय खूंखार दुश्मनों से घिरा हुआ हूं, नहीं कह सकता कि आज मरूं या कल, मगर तू मेरे मरने का अच्छी तरह से निश्चय कर लीजियो तब इस कलमदान को खोलियो। इसकी ताली मैं तुझे नहीं देता, जब इसके खोलने का समय आवे तब जिस तरह हो सके खोल डालियो।" इतना कहकर मेरे नाना वहां से चले गए और रोती हुई मेरी मां को उसी तरह छोड़ गए।

इन्द्र - मैं समझता हूं कि यह वही कलमदान था जो कृष्णा जिन्न ने महाराज के सामने पेश किया था और जिसका हाल अभी तुम्हारे सामने भाई साहब ने बयान किया है!

इन्दिरा - जी हां।

इन्द्र - निःसन्देह यह अनूठा किस्सा है, अच्छा तब क्या हुआ?

इन्दिरा - घंटे भर तक मेरी मां तरह-तरह की बातें सोचती और रोती रही। इसके बाद दामोदरसिंह पुनः इस कमरे में आये और मेरी मां को रोती हुई देखकर बोले, "सर्यू, तू अभी तक बैठी रो रही है। अरी बेटी, तुझे तो अब अपने प्यारे बाप के लिए जन्म भर रोना है। इस समय तू अपने दिल को सम्हाल और जाने की शीघ्र तैयारी कर, अगर तू विलम्ब करेगी तो मुझे बड़ा कष्ट होगा और मुझे कष्ट देना तेरा धर्म नहीं है। बस अब अपने को सम्हाल। हां मैं एक दफे पुनः तुझसे पूछता हूं कि उस कलमदान के विषय में जो मैंने कहा है तू वैसा ही करेगी न' इसके जवाब में मेरी मां ने सिसककर

कहा, "जो कुछ आपने आज्ञा की है मैं उसका पालन करूंगी, परन्तु मेरे पिता, यह तो बताओ कि तुम ऐसा क्यों कर रहे हो?'

मेरी मां ने बहुत कुछ मिन्नत और आजिजी की मगर नाना साहब ने अपनी बदहवासी का सबब कुछ भी बयान न किया और बाहर चले गये। थोड़ी ही देर बाद एक लौंडी ने आकर खबर दी कि बालाजी (मेरे पिता इन्द्रदेव) आ गये। उस समय मेरी मां को नाना साहब की बातों का निश्चय हो गया और वह समझ गई कि अब इस समय यहां से रवाना हो जाना पड़ेगा।

थोड़ी ही देर बाद मेरे पिता घर में आये। मां ने उनसे उनके आने का सबब पूछा जिसके जवाब में उन्होंने कहा कि तुम्हारे पिता ने एक विश्वासी आदमी के हाथ मुझे पत्र भेजा जिसमें केवल इतना ही लिखा था कि इस पत्र को देखते ही चल पड़ो और जितनी जल्दी हो सके हमारे पास पहुंचो। मैं पत्र पढ़ते ही घबड़ा गया, उस आदमी से पूछा कि घर में कुशल तो है उसने कहा कि सब कुशल है। मैं बहुत तेज घोड़े पर सवार कराके तुम्हारे पास भेजा गया हूं, अब मेरा घोड़ा लौट जाने लायक नहीं है मगर तुम बहुत जल्द उनके पास जाओ। मैं घबड़ाया हुआ एक तेज घोड़े पर सवार होकर उसी वक्त चल पड़ा मगर इस समय यहां पहुंचने पर उनसे ऐसा करने का सबब पूछा तो कोई भी जवाब न मिला। उन्होंने एक कागज मेरे हाथ में देकर कहा कि इसे हिफाजत से रखना। इस कागज में मैंने अपनी कुल जायदाद इन्दिरा के नाम लिख दी है। मेरी जिन्दगी का अब कोई ठिकाना नहीं। तुम इस कागज को अपने पास रक्खो और अपनी स्त्री तथा लड़की को लेकर इसी समय यहां से चले जाओ, क्योंकि अब जमानिया में बड़ा भारी उपद्रव उठा चाहता है। बस इससे ज्यादे और कुछ न कहेंगे। तुम्हारी बिदाई का सब बन्दोबस्त हो चुका है, सवारी इत्यादि तैयार है।'

इतना कहकर मेरे पिता चुप हो गये और दम भर के बाद उन्होंने मेरी मां से पूछा कि इन सब बातों का सबब यदि तुम्हें कुछ मालूम हो तो कहो। मेरी मां ने भी थोड़ी देर पहिले जो कुछ हो चुका था कह सुनाया मगर कलमदान के बारे में केवल इतना ही कहा कि पिताजी यह कलमदान इन्दिरा के लिए दे गये हैं। यह कह गये हैं कि कोई इसे खोलने न पावे, जब इन्दिरा की शादी हो जाये तो वह अपने हाथ से इसे खोले।

इसके बाद मेरी पिताजी मिलने के लिए मेरी नानी के पास गये और देखा कि रोते-रोते उनकी अजीब हालत हो गई है। मेरे पिता को देखकर वह और भी रोने लगी मगर इसका सबब कुछ भी न बता सकी कि उसके मालिक को आज क्या हो गया है,

वे इतने बदहवास क्यों हैं, और अपनी लड़की को इसी समय यहां से बिदा करने पर क्यों मजबूर हो रहे हैं, क्योंकि उस बेचारी को भी इसका कुछ मालूम न था।

यह सब बातें जो मैं ऊपर कह आई हूं सिवाय हम पांच आदमियों के और किसी को मालूम न थीं। उस घर का और कोई भी यह नहीं जानता था कि आज दामोदरसिंह बदहवास हो रहे हैं और अपनी लड़की को किसी लाचारी से इसी समय बिदा कर रहे हैं।

थोड़ी देर बाद हम लोग बिदा कर दिये गये। मेरी मां रोती हुई मुझे साथ लेकर रथ में रवाना हुई जिसमें मजबूत घोड़े जुते हुए थे, और इसी तरह के दूसरे रथ पर बहुत-सा सामान लेकर मेरे पिता सवार हुए और हम लोग वहां से रवाना हुए। हिफाजत के लिए कई हथियारबन्द सवार भी हम लोगों के साथ थे।

जमानिया से मेरे पिता का मकान केवल तीस-पैंतीस कोस की दूरी पर होगा। जिस वक्त हम लोग घर से रवाना हुए उस वक्त दो घंटे रात बाकी थी और जिस समय हम लोग घर पहुंचे उस समय पहर भर से भी ज्यादे दिन बाकी था। मेरी मां तमाम रास्ते रोती गई और घर पहुंचने पर भी कई दिनों तक उसका रोना बन्द न हुआ। मेरे पिता के रहने का स्थान बड़ा ही सुन्दर और रमणीक है मगर उसके अन्दर जाने का रास्ता बहुत ही गुप्त रक्खा गया है।

इस जगह इन्दिरा ने इन्द्रदेव के मकान और रास्ते का थोड़ा-सा हाल बयान किया और उसके बाद फिर अपना किस्सा कहने लगी -

इन्दिरा - मेरे पिता तिलिस्मी दारोगा हैं और यद्यपि खुद भी बड़े भारी ऐयार हैं तथापि उनके यहां कई ऐयार नौकर हैं। उन्होंने अपने दो ऐयारों को इसलिए जमानिया भेजा कि वे एक साथ मिलकर या अलग-अलग होकर दामोदरसिंहजी की बदहवासी और परेशानी का पता गुप्त रीति से लगावें और यह मालूम करें कि वह कौन से दुश्मनों की चालबाजियों के शिकार हो रहे हैं। इस बीच मेरे पिता ने पुनः मेरी मां से कलमदान का हाल पूछा जो उसके पिता ने उसे दिया था और मेरी मां ने उसका हाल साफ-साफ कह दिया अर्थात् जो कुछ उस कलमदान के विषय में दामोदरसिंहजी ने नसीहत इत्यादि की थी वह साफ-साफ कह सुनाया।

जिस दिन मैं अपनी मां के साथ पिता के घर गई उसके ठीक पन्द्रहवें दिन संध्या के समय मेरे पिता के एक ऐयार ने खबर पहुंचाई कि जमानिया में प्रातःकाल सरकारी महल के पास वाले चौमुहाने पर दामोदरसिंहजी की लाश पाई गई जो लहू से भरी हुई

थी और सिर का पता न था। महाराज ने उस लाश को अपने पास उठवा मंगाया और तहकीकात हो रही है। इस खबर को सुनते ही मेरी मां जोर-जोर से रोने और अपना माथा पीटने लगी। थोड़ी ही देर बाद मेरे ननिहाल का भी एक दूत आ पहुंचा और उसने भी वही खबर सुनाई। पिताजी ने मेरी मां को बहुत समझाया और कहा कि कलमदान देते समय तुम्हारे पिता ने तुमसे कहा था कि मेरे मरने के बाद इस कलमदान को खोलना मगर मेरे मरने का अच्छी तरह निश्चय कर लेना। उनका ऐसा कहना बेसबब न था। 'मरने का निश्चय कर लेना' यह बात उन्होंने निःसन्देह इसीलिए कही होगी कि उनके मरने के विषय में लोग हम सभों को धोखा देंगे यह बात उन्हें अच्छी तरह मालूम थी, अस्तु अभी से रो-रोकर अपने को हलकान मत करो और पहिले मुझे जमानिया जाकर उनके मरने के विषय में निश्चय कर लेने दो। यह जरूर ताज्जुब और शक की बात है कि उन्हें मारकर कोई उनका सिर ले जाय और धड़ उसी तरह रहने दे। इसके अतिरिक्त तुम्हारी मां का भी बन्दोबस्त करना चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि वह किसी दूसरे ही की लाश के साथ सती हो जाये।मेरी मां ने जमानिया जाने की इच्छा प्रकट की परन्तु पिता ने स्वीकार न करके कहा कि यह बात तुम्हारे पिता को भी स्वीकार न थी, नहीं तो अपनी जिन्दगी में ही तुम्हें यहां बिदा न कर देते, इत्यादि बहुत कुछ समझा-बुझाकर उसे शान्त किया और स्वयं उसी समय दो-तीन ऐयारों को साथ लेकर जमानिया की तरफ रवाना हो गए।

इतना कहकर इन्दिरा रुक गई और एक लम्बी सांस लेकर फिर बोली -

इन्दिरा - उस समय मेरे पिता पर जो कुछ मुसीबत बीती थी उसका हाल उन्हीं की जुबानी सुनना अच्छा मालूम होगा तथापि जो कुछ मुझे मालूम है मैं बयान करती हूं। मेरे पिता जब जमानिया पहुंचे तो सीधे घर चले गए। वहां पर देखा तो मेरी नानी को अपने पति की लाश के साथ सती होने की तैयारी करते पाया क्योंकि देखभाल करने के बाद राजा साहब ने उनकी लाश उनके घर भेजवा दी थी। मेरे पिता ने मेरी नानी को बहुत समझाया और कहा कि इस लाश के साथ तुम्हारा सती होना उचित नहीं है। कौन ठिकाना, यह कार्रवाई धोखा देने के लिए की गई हो और यदि यह दूसरे की लाश निकली तो तुम स्वयं विचार सकती हो कि तुम्हारा सती होना कितना बुरा होगा, अस्तु तुम इसकी दाह-क्रिया होने दो और इस बीच में मैं इस मामले का असल पता लगा लूंगा, अगर यह लाश वास्तव में उन्हीं की होगी तो खूनी का या उनके सिर का पता लगाना कोई कठिन न होगा! इत्यादि बहुत-सी बातें समझाकर उनको सती होने से रोका, स्वयं खूनियों का पता लगाने का उद्योग करने लगे।

आधी रात का समय था, सर्दी खूब पड़ रही थी। लोग लेहाफ के अन्दर मुंह छिपाये अपने-अपने घरों में सो रहे थे। मेरे पिता सूरत बदले और चेहरे पर नकाब डाले घूमते-फिरते उसी चौमुहाने पर जा पहुंचे जहां मेरे नाना की लाश पाई गई थी। उस समय चारों तरफ सन्नाटा छाया हुआ था। वे एक दुकान की आड़ में खड़े होकर कुछ सोच रहे थे कि दाहिनी तरफ से एक आदमी को आते देखा। वह आदमी भी अपने चेहरे को नकाब से छुपाए हुए था। मेरे पिता के देखते ही देखते वह उस चौमुहाने पर कुछ रखकर पीछे की तरफ मुड़ गया। मेरे पिता ने पास जाकर देखा तो एक लिफाफे पर नजर पड़ी, उसे उठा लिया और घर लौट आये। शमादान के सामने लिफाफा खोला, उसके अन्दर एक चीठी थी, उसमें यह लिखा था -

"दामोदरसिंह के खूनी का जो कोई पता लगाना चाहे उसे अपनी तरफ से भी होशियार रहना चाहिए। ताज्जुब नहीं कि उसकी भी वही दशा हो जो दामोदरसिंह की हुई।"

इस पत्र को पढ़कर मेरे पिता तरद्दुद में पड़ गये और सबेरा होने तक तरह-तरह की बातें सोचते-विचारते रहे। उन्हें आशा थी कि सबेरा होने पर उनके ऐयार लोग घर लौट आयेंगे और रात भर में जो कुछ उन्होंने किया है उसका हाल कहेंगे क्योंकि ऐसा करने के लिए उन्होंने अपने ऐयारों को ताकीद कर दी थी, मगर उनका विचार ठीक न निकला अर्थात् उनके ऐयार लौटकर न आये। दूसरा दिन भी बीत गया और तीसरे दिन भी दो पहर रात जाते-जाते तक मेरे पिता ने उन लोगों का इन्तजार किया मगर सब व्यर्थ था, उन ऐयारों का हाल कुछ भी मालूम न हुआ। आखिर लाचार होकर स्वयं उनकी खोज में जाने के लिए तैयार हो गए और घर से बाहर निकला ही चाहते थे कि कमरे का दरवाजा खुला और महाराज के एक चोबदार को साथ लिए नाना साहब का एक सिपाही कमरे के अन्दर दाखिल हुआ। पिता को बड़ा ताज्जुब हुआ और उन्होंने चोबदार से वहां आने का सबब पूछा। चोबदार ने जवाब दिया कि आपको कुंअर साहब (गोपालसिंह) ने शीघ्र बुलाया है और अपने साथ लाने के लिए मुझे सख्त ताकीद की है।

गोपाल - हां ठीक है, मैंने उन्हें अपनी मदद के लिए बुलाया था क्योंकि मेरे और इन्द्रदेव के बीच दोस्ती थी और उस समय मैं दिली तकलीफों से बहुत बेचैन था। इन्द्रदेव से और मुझसे अब भी वैसी ही दोस्ती है, वह मेरा सच्चा दोस्त है, चाहे वर्षों हम दोनों में पत्रव्यवहार न हो दोस्ती में किसी तरह की कमी नहीं आ सकती।

इन्दिरा - बेशक ऐसा ही है! तो उस समय का हाल और उसके बाद मेरे पिता से और आपसे जो-जो बातें हुई थीं सो आप अच्छी तरह बयान कर सकते हैं।

गोपाल - नहीं - नहीं, जिस तरह तुम और हाल कह रही हो उसी तरह वह भी कह जाओ, मैं समझता हूं कि इन्द्रदेव ने यह सब हाल तुमसे कहा होगा।

इन्दिरा - जी हां इस घटना के कई वर्ष बाद पिताजी ने मुझसे सब हाल कहा था जो अभी तक मुझे अच्छी तरह याद है मगर मैं उन बातों को मुख्तसर ही में बयान करती हूं।

गोपाल - क्या हर्ज है तुम मुख्तसर में बयान कर जाओ, जहां भूलोगी मैं बता दूंगा, यदि वह हाल मुझे भी मालूम होगा।

इन्दिरा - जो आज्ञा! मेरे पिता जब चोबदार के साथ राजमहल में गये तो मालूम हुआ कि कुंअर साहब घर में नहीं हैं, कहीं बाहर गये हैं। आश्चर्य में आकर उन्होंने कुंअर साहब के खास खिदमतगार से दरियाफ्त किया तो उसने जवाब दिया कि आपके पास चोबदार भेजने के बाद बहुत देर तक अकेले बैठकर आपका इन्तजार करते रहे मगर जब आपके आने में देर हुई तो घबड़ाकर खुद आपके मकान की तरफ चले गये। यह सुनते ही मेरे पिता घबड़ाकर वहां से लौटे और फौरन ही घर पहुंचे मगर कुंअर साहब से मुलाकात न हुई। दरियाफ्त करने पर पहरेदार ने कहा कि कुंअर साहब यहां नहीं आए हैं। वे पुनः लौटकर राजमहल में गये परन्तु कुंअर साहब का पता न लगना था और न लगा। मेरे पिताजी की वह तमाम रात परेशानी में बीती और उस समय उन्हें नाना साहब की बात याद आई जो उन्हेंने मेरे पिता से कही थी कि अब जमानिया में बड़ा भारी उपद्रव उठा चाहता है।

तमाम रात बीत गई, दूसरा दिन चला गया, तीसरा दिन गुजर गया, मगर कुंअर साहब का पता न लगा। सैकडों आदमी खोज में निकले, तमाम शहर में कोलाहल मच गया। जिसे देखिए वह इन्हीं के विषय में तरह-तरह की बातें कहता और आश्चर्य करता था। उन दिनों कुंअर साहब (गोपालसिंह) की शादी लक्ष्मीदेवी से लगी हुई थी और तिलिस्मी दारोगा साहब शादी के विरुद्ध बातें किया करते थे, इस बात की चर्चा भी शहर में फैली हुई थी।

चौथे दिन आधी रात के समय मेरे पिता नाना साहब वाले मकान में फाटक के ऊपर वाले कमरे के अन्दर पलंग पर लेटे हुए कुंअर साहब के विषय में कुछ सोच रहे थे कि यकायक कमरे का दरवाजा खुला और आप (गोपालसिंह) कमरे के अन्दर आते हुए दिखाई पड़े, मुहब्बत और दोस्ती में बड़ाई-छुटाई का दर्जा कायम नहीं रहता। कुंअर

साहब को देखते ही मेरे पिता उठ खड़े हुए और दौड़कर उनके गले से चिपटकर बोले, "क्यों साहब, आप इतने दिनों तक कहा थे'

उस समय कुंअर साहब की आंखों से आंसू की बूंदें टपटपाकर गिर रही थीं, चेहरे पर उदासी और तकलीफ की निशानी पाई जाती थी, और उन तीन दिनों में ही उनके बदन की यह हालत हो गई थी कि महीनों के बीमार मालूम पड़ते थे। मेरे पिता ने हाथ-मुंह धुलवाया तथा अपने पलंग पर बैठाकर हालचाल पूछा और कुंअर साहब ने इस तरह अपना हाल बयान किया -

"उस दिन मैंने तुमको बुलाने के लिए चोबदार भेजा, जब तक चोबदार तुम्हारे यहां से लौटकर आये उसके पहिले ही मेरे एक खिदमतगार ने मुझे इत्तिला दी कि इन्द्रदेव ने आपको अपने घर अकेले ही बुलाया है। मैं उसी समय उठ खड़ा हुआ और अकेले तुम्हारे मकान की तरफ रवाना हुआ। जब आधे रास्ते में पहुंचा तो तुम्हारे यहां का अर्थात् दामोदरसिंह का खिदमतगार जिसका नाम रामप्यारे है मिला और उसने कहा कि इन्द्रदेव गंगा किनारे की तरफ गये हैं और आपको उसी जगह बुलाया है। मैं क्या जानता था कि एक अदना खिदमतगार मुझसे दगा करेगा। मैं बेधड़क उसके साथ गंगा के किनारे की तरफ रवाना हुआ। आधी रात से ज्यादे तो जा ही चुकी थी अतएव गंगा के किनारे बिल्कुल सन्नाटा छाया हुआ था। मैंने वहां पहुंचकर जब किसी को न पाया तो उस नौकर से पूछा कि इन्द्रदेव कहां हैं उसने जवाब दिया कि ठहरिये आते होंगे। उस घाट पर केवल एक डोंगी बंधी हुई थी, मैं कुछ विचारता हुआ उस डोंगी की तरफ देख रहा था कि यकायक दोनों तरफ से दस-बारह आदमी चेहरे पर नकाब डाले हुए आ पहुंचे और उन सभों ने फुर्ती के साथ मुझे गिरफ्तार कर लिया। वे सब बड़े मजबूत और ताकतवर थे और सब-के-सब एक साथ मुझसे लिपट गये। एक ने मेरे मुंह पर एक मोटा कपड़ा डालकर ऐसा कस दिया कि न तो मैं बोल सकता था और न कुछ देख सकता था। बात की बात में मेरी मुश्कें बांध दी गईं और जबर्दस्ती उसी डोंगी पर बैठा दिया गया जो घाट के किनारे बंधी हुई थी। डोंगी किनारे से खोल दी गई और बड़ी तेजी से चलाई गई। मैं नहीं कह सकता कि वे लोग कै आदमी थे और दो ही घण्टे में जब तक कि मैं उस पर सवार था डोंगी को लेकर कितनी दूर ले गये! जब लगभग दो घण्टे बीत गये तब डोंगी किनारे लगी और मैं उस पर से उतारकर एक घोड़े पर चढ़ाया गया, मेरे दोनों पैर नीचे की तरफ मजबूती के साथ बांध दिये गए, हाथ की रस्सी ढीली कर दी गई जिससे मैं घोड़े की काठी पकड़ सकूं और घोड़ा तेजी के साथ एक तरफ को दौड़ाया गया। मैं दोनों हाथों से घोड़े की काठी पकड़े हुए था। यद्यपि मैं देखने और बोलने से लाचार कर दिया गया था मगर अन्दाज से और

घोड़ों की टापों की आवाज से मालूम हो गया कि मुझे कई सवार घेरे हुए जा रहे हैं और मेरे घोड़े की लगाम किसी सवार के हाथ में है। कभी तेजी से और कभी धीरे-धीरे चलते-चलते दो पहर से ज्यादे बीत गए, पैरों में दर्द होने लगा और थकावट ऐसी जान पड़ने लगी कि मानो तमाम बदन चूर-चूर हो गया है। इसके बाद घोड़े रोके गए और मैं नीचे उतारकर एक पेड़ के साथ कसके बांध दिया गया और उस समय मेरे मुंह का कपड़ा खोल दिया गया। मैंने चारों तरफ निगाह दौड़ाई तो अपने को एक घने जंगल में पाया। दस आदमी मोटे-मुस्टंडे और उनकी सवारी के दस घोड़े सामने खड़े थे। पास ही में पानी का एक चश्मा बह रहा था, कई आदमी जीन खोलकर घोड़ों को ठंडा करने और चराने की फिक्र में लगे और बाकी शैतान हाथ में नंगी तलवार लेकर मेरे चारों तरह खड़े हो गए। मैं चुपचाप सभों की तरफ देखता था और मुंह से कुछ भी न बोलता था और न वे लोग ही मुझसे कुछ बात करते थे। (लम्बी सांस लेकर) यदि गर्मी का दिन होता तो शायद मेरी जान निकल जाती क्योंकि उन कम्बख्तों ने मुझे पानी तक के लिए नहीं पूछा और स्वयं खा-पीकर ठीक हो गए, अस्तु पहर भर के बाद फिर मेरी वही दुर्दशा की गई अर्थात् देखने और बोलने से लाचार करके घोड़े पर उसी तरह बैठाया गया और फिर सफर शुरू हुआ। पुनः दो पहर से ज्यादे देर तक सफर करना पड़ा और इसके बाद मैं घोड़े से नीचे उतारकर पैदल चलाया गया। मेरे पैर दर्द और तकलीफ से बेकार हो रहे थे मगर लाचारी ने फिर भी चौथाई कोस तक चलाया और इसके बाद चौखट लांघने की नौबत आई, तब मैंने समझा कि अब किसी मकान में जा रहा हूं। मुझे चार दफे चौखट लांघनी पड़ी जिसके बाद मैं एक खम्भे के साथ बांध दिया गया। तब मेरे मुंह पर से कपड़ा हटाया गया।"

तिलिस्मी लेख : बाजे से निकली आवाज का मतलब यह है -

सारा तिलिस्म तोड़ने का खयाल न करो और इस तिलिस्म की ताली किसी चलती -फिरती से प्राप्त करो। इस बाजे में वे सब बातें भरी हैं जिनकी तुम्हें जरूरत है, ताली लगाया करो और सुना करो। अगर एक ही दफे सुनने में समझ न आवे तो दोहरा करके भी सुन सकते हो। इसकी तर्कीब और ताली इसी कमरे में है ढूंढो।

महाराज सूर्यकान्त की तस्वीर के नीचे लिखे हुए बारीक अक्षरों वाले मजमून का अर्थ यह है -

("स्वर दै गिन कै वर्ग पै") का अर्थ यह है -

खूब समझ के तब आगे पैर रक्खो।

बाजे वाले चौंतरे में खोजो , तिलिस्मी खंजर अपने देह से अलग मत करो नहीं तो जान पर आ बनेगी।

(चौदहवां भाग समाप्त)

चंद्रकांता संतति - Chandrakanta Santati

चंद्रकांता संतति लोक विश्रुत साहित्यकार बाबू देवकीनंदन खत्री का विश्वप्रसिद्ध ऐय्यारी उपन्यास है।

बाबू देवकीनंदन खत्री जी ने पहले चन्द्रकान्ता लिखा फिर उसकी लोकप्रियता और सफलता को देख कर उन्होंने कहानी को आगे बढ़ाया और 'चन्द्रकान्ता संतति' की रचना की। हिन्दी के प्रचार प्रसार में यह उपन्यास मील का पत्थर है। कहते हैं कि लाखों लोगों ने चन्द्रकान्ता संतति को पढ़ने के लिए ही हिन्दी सीखी। घटना प्रधान, तिलिस्म, जादूगरी, रहस्यलोक, एय्यारी की पृष्ठभूमि वाला हिन्दी का यह उपन्यास आज भी लोकप्रियता के शीर्ष पर है।

बाबू देवकीनंदन खत्री लिखित चन्द्रकान्ता संतति हिन्दी साहित्य का ऐसा उपन्यास है जिसने पूरे देश में तहलका मचाया था। इस उपन्यास की लोकप्रियता का अंदाजा इस बात से ही लगाया जा सकता है कि इसे पढ़ने के लिए हजारों गैर-हिंदी भाषियों ने हिंदी सीखी। चंद्रकांता संतति उपन्यास को आधार बनाकर निरजा गुलेरी ने इसी नाम से टेलीविजन धारावाहिक बनाई। यह धारावाहिक दूरदर्शन के सर्वाधिक लोकप्रिय धारावाहिकों में शुमार हुई।

"चन्द्रकान्ता" और "चन्द्रकान्ता सन्तति" में यद्यपि इस बात का पता नहीं लगेगा कि कब और कहाँ भाषा का परिवर्तन हो गया परन्तु उसके आरम्भ और अन्त में आप ठीक वैसा ही परिवर्तन पायेंगे जैसा बालक और वृद्ध में। एक दम से बहुत से संस्कृत शब्दों का प्रचार करते तो कभी सम्भव न था कि उतने संस्कृत शब्द हम ग्रामीण लोगों को याद करा देते। इस पुस्तक के लिए वह लोग भी बोधगम्य उर्दू के शब्दों को अपनी विशुद्ध हिन्दी में लाने लगे जो आरम्भ में इसका विरोध करते थे।

काव्य के लिए ब्रज भाषा का प्रयोग होता था और गद्य के लिए खड़ी बोली का। लेखक ने इसी का अनुसरण करते हुए उपन्यास के काव्यांशों के लिए ब्रज भाषा चुना है।

चंद्रकांता संतति - Chandrakanta Santati in Hindi

1. चंद्रकांता संतति पहला भाग
2. चंद्रकांता संतति दूसरा भाग
3. चंद्रकांता संतति तीसरा भाग
4. चंद्रकांता संतति चौथा भाग
5. चंद्रकांता संतति पाँचवाँ भाग
6. चंद्रकांता संतति छठवां भाग
7. चंद्रकांता संतति सातवाँ भाग
8. चंद्रकांता संतति आठवाँ भाग
9. चंद्रकांता संतति नौवां भाग
10. चंद्रकांता संतति दसवां भाग
11. चंद्रकांता संतति ग्यारहवां भाग
12. चंद्रकांता संतति बारहवां भाग
13. चंद्रकांता संतति तेरहवां भाग
14. चंद्रकांता संतति चौदहवां भाग
15. चंद्रकांता संतति पन्द्रहवां भाग
16. चंद्रकांता संतति सोलहवां भाग
17. चंद्रकांता संतति सत्रहवां भाग
18. चंद्रकांता संतति अठारहवां भाग
19. चंद्रकांता संतति उन्नीसवां भाग
20. चंद्रकांता संतति बीसवां भाग
21. चंद्रकांता संतति इक्कीसवां भाग
22. चंद्रकांता संतति बाईसवां भाग
23. चंद्रकांता संतति तेईसवां भाग
24. चंद्रकांता संतति चौबीसवां भाग

https://www.hindiadda.com/chandrakanta-santati-part-xiv/